

मई 1991

मूल्य तीन रुपये

आजकल



तुम्हारा गांव

सीताकान्त महापात्र

लंबी दुपहरी जलते-जलते
अंत में फीकी पड़ जाती है
खड़ी घाटी कुर्ते के बटन खोल
दूर से आते निर्जन पथिक को दिखाती है—
रक्त-धुला दिगंत
एक-दूसरे का हाथ थामे
तुम्हारे गांव के चारों ओर
पुचि खेलते असंख्य पर्वत।

तुम्हारे गाल की चिकनी सीढ़ियों से
सूर्य जल्दी-जल्दी उतर जाता है
दो पहाड़ों का चिमटा
उस दहकते आग के टुकड़े को
डाल देता है
गीली हवा की नीली शून्यता में।

काले, शाल के पेड़ से
मेरी हताशा मित्रता करती है।

तुम्हारे गांव में
माटी की चित्रित भीत पर
हाथी नाचते हैं
शाल की लंबी देह में
फूल खिलते हैं
मधुमक्खी के छत्ते होते हैं
शहद ढूँढता, फूल ढूँढता, एक धांगड़ा*
उतर जाता है, कूद पड़ता है

नीले अंधेरे में, गीले तारों में
टूटे, रौंदे फूलों में।

उस पुष्पित नाभि केंद्र से
कभी कोई लौटकर नहीं आता।

तारों की रोशनी
चुप्पी की हांडी तोड़ डालती है
एक-दूसरे का हाथ थामे, पैर पटकती
सारी हताशाएं नाचती हैं
मुट्ठियों में इंद्र-धनुष
परछाइयों की आंखों में रोशनी
चेहरों पर अनजानी पीड़ा लिए।

दूसरे दिन सुबह
हम लौट आते हैं
दोनों पहाड़ों के बीच सिर टिकाए
तुम्हारा गांव तब भी सोया होता है
पूतना के दो विशाल
स्तनों के बीच बाल-कृष्ण। □

* धांगड़ा—कुंवारा आदिवासी युवक

ओड़िया से अनुवाद : राजेन्द्र प्रसाद मिश्र
वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी
एन.टी.पी.सी. लिमिटेड, 62-69, नेहरू प्लेस
नई दिल्ली-110019





आजकल

आधुनिक साहित्य
एवं
संस्कृति का संवाहक मासिक

वर्ष : 47; अंक : 1; पूर्णांक : 561;
मई : 1991 (वैशाख-ज्येष्ठ, 1913)

सम्पादक
सुरेश चन्द्र शर्मा

सहायक सम्पादक
प्रवीण उपाध्याय

उप-सम्पादक
विजय कुमार

व्यापार व्यवस्थापक
: जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक
: शकुन्तला
आवरण सज्जा
: एम. एम. मलिक

रचना - क्रम

2. प्रतिक्रियाएं

3. सम्पादकीय : एक बार फिर

लेख :

- | | |
|--|--------------------------|
| 4. भावात्मक एकता और
आन्ध्र साहित्य | भीमसेन निर्मल |
| 7. बौद्ध दर्शन पर आधारित
तमिल महाकाव्य मणिमेखला | एस. एन. गणेशन |
| 11. अनामदास का पोथा : मानवीय
जिजीविषा की कहानी | डा. माजदा असद |
| 27. शैलाश्रयों पर अंकित
आदिम नृत्य | डा. नन्दिता शर्मा |
| 33. महान आदिवासी कवि :
भीमा भोई | देवेन्द्र कुमार बैसन्तरी |
| 36. जौनसार बावर का सांस्कृतिक
मेला : 'बिस्तू' | डा. प्रह्लाद सिंह रावत |

कहानियां :

- | | |
|---------------------------|---------------------|
| 14. कवि कथा | अमर गोस्वामी |
| 22. वे लोग | अमरेंद्र मिश्र |
| 29. घाव | क्षितिज शर्मा |
| 26. ईंट का मजहब (लघु कथा) | मार्टिन जान 'अजनबी' |

23. कविताएं :

आवरण पृष्ठ 2 पर सीताकान्त महापात्र।

श्याम अविनाश, रावेल पुष्प, चम्पा वैद, भारतेन्दु मिश्र,
गायत्री माहेश्वरी, जगदीश श्रीवास्तव, दीनेन्दु भारती
और पृष्ठ 35 पर डा. श्रीराम परिहार

इसके अतिरिक्त पुस्तक समीक्षा, वातायन और रंगमंच
आदि नियमित स्तंभ।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक 'आजकल' (हिन्दी),
प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 387069



आजकल का हास्य व्यंग्य विशेषांक फरवरी 1991 अंक मिला। इस अंक की यूँ तो सभी रचनाएं ठीक थीं किन्तु लेख 'खाली स्थान भरो', शंकर पुणतांबेकर का 'यात्रा' व 'जहनीयत' तथा 'ईंटों के आंसू' कहानियां अच्छी लगीं।

फरवरी अंक को 'हास्य व्यंग्य' अंक बनाने की घोषणा से प्रसन्नता हुई। आज के मशीनी युग में मनुष्य भी एक मशीन बनकर रह गया है। उसके जीवन का हास्य बसों, ट्रेनों में धक्के तथा दफ्तरों की फाइलों में धूल खाता है या फिर पेट भर दो रोटी का जुगाड़ करने की जद्दोजहद में गुम हो गया है। इसी खोए हुए हास्य को वापस लाना होगा। आपके द्वारा इस दिशा में उठाया गया कदम सराहनीय है। □

**राजीव 'राज', 17/5, लेखा नगर
रिज रोड, जबलपुर-482001**

आजकल का जनवरी अंक समय पर मिला। आपके सम्पादकीय से लगा कि यह साक्षात्कार औदात्य के उत्तम क्षणों में आपके साथ कमोबेश घटित हो चुका है तभी आप जगदीश गुप्त के शब्दों में अपना कृत्य-कथन करते हैं—“एक टूटे-भटकते कवि की शिराओं में पार्वती-परमेश्वरी वागर्थ होता है।”

इसके बाद अब कवि या कविता के विषय में कहना ही क्या शेष रह जाता है?

दूसरी विशिष्ट सम्मोहक सामग्री रही—रामेश्वर शुक्ल अंचल जी की काव्य रचना 'मूर्ति पुजारी से'। सच कहूँ—बहुत दिनों बाद आजकल में एक बहुत अच्छी काव्य-रचना पढ़ने को मिली है। इस रचना गंगा के समक्ष अन्य काव्य रचनाएं अल्पजीवी, सामान्य जलधार-सी लगती हैं। इस एक काव्य रचना और आपके कविता सम्बंधी सम्पादकीय ने इस अंक को विशेष जीवन-ज्योति, प्रदान की है। ऐसे डा. देवराज पथिक, फौजदार माली, अशोक आन्द्रे और सुभाष रस्तोगी की भी रचनाएं कुछ कुछ काव्य-परितोष दे सकीं।

डा. दिविक रमेश द्वारा अनुवादित 'नए कवियों से गपशप' यों अच्छा लगा—कुछ जानकारी मिली मगर ऐसा लगा कि अनुवाद सही और ठीक नहीं हो पाया है—एक आंतरिक सहज प्रवाह का अभाव खटकने लगता है।

डा. वेद प्रकाश अमिताभ का आलेख 'कविता को हथियार बनाने की मानसिकता' अच्छा रहा। उनके विचारों, दृष्टिकोणों को सतर्क सोद्धारण स्पष्ट करता हुआ। इस विषय को कुछ और गहराई व व्यापकता से जोड़ा जाता तो वह निश्चय ही ज्यादा पठनीय व प्रभावशीलता पाता।

जीवन का गान करने वाले कवि बच्चन पर आयोजित परिचर्चा भी काफी प्रेरक व ज्ञानवर्धक रही। □

**रवीन्द्रनाथ ओझा, डाकबंगला रोड
बेतिया, (बिहार)-845438**

आजकल के फरवरी हास्य व्यंग्य विशेषांक की सभी प्रस्तुतियां प्रशंसनीय हैं। अंक पढ़ कर मैं तो हास्य व्यंग्य के कुंड में ही डूब गया। आप कदाचित् इसे कथन को भंग की तरंग में डूबा हुआ भी कह सकते हैं किन्तु बात सच है। आजकल के इस अंक को पांच बार पढ़ कर भी नहीं अधाया। □

चन्द्रकान्त यादव, चांदीतारा, वाराणसी

फरवरी 1991 का आजकल मिला। सभी रचनाएं अपने आप में रोचक और ज्ञानवर्धक लगीं। आलोक कांत और डा. लक्ष्मी शंकर व्यास के लेख जहां हिन्दी साहित्य के उभयकालों के हास्य-व्यंग्य से परिचित कराते हैं, वहीं डा. शेरजंग गर्ग और डा. मनोहर लाल के लेख वर्तमान व्यंग्य साहित्य और उसकी बनावट के मूलभूत तत्वों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। इसी तरह राधेश्याम और ज्ञान प्रकाश विवेक की कहानियां तथा दिलीप सिंह और डा. शंकर पुणतांबेकर के व्यंग्य भी कम रोचक नहीं हैं। मार्टिन जॉन 'अजनबी' की लघुकथा 'ईंटों के आंसू' हर वतनपरस्त पाठक को वर्तमान साम्प्रदायिकता की राष्ट्रभ्रंजक मनःस्थिति से ऊपर उठकर सोचने को मजबूर करती है। डा. हरीश निगम का नवगीत मन को भाया। अच्छा होता कुछ हास्य-व्यंग्य कविताएं भी इस अंक में आतीं। सुरुचिपूर्ण सामग्रियों से भरपूर अंक के लिए आपको धन्यवाद। □

**सूर्यदेव पाठक 'पराग',
गाम व पोस्ट भिट्टी, बाया-गोरयाकोठी,
जिला-सीवान (बिहार)-841434**

आजकल के नवम्बर-90 के अंक में ही आपने 'कफन' शीर्षक से एक मुक्तक प्रदीप शर्मा 'दीप' के नाम से छापा है। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि यह रचना प्रदीप शर्मा 'दीप' की लिखी हुई नहीं है। यह मुक्तक जाने-माने रचनाकार 'उर्मिलेश' द्वारा लिखा गया है।

यदि आप इस रचना को देखना चाहें तो डायमण्ड पाकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी रुबाईयां और मुक्तक' नामक पुस्तक के (अगस्त-1981), प्रथम संस्करण, पृष्ठ-16 पर देख सकते हैं। यह मुद्दा अलग है कि प्रदीप शर्मा 'दीप' ने उक्त मुक्तक की तीसरी और चौथी पंक्ति में मामूली फेर-बदल किया है। उम्मीद है आप इस पर ध्यान देंगे। □

**संत प्रसाद वर्मा 'समीर', म. नं.-114,
सलोरी, इलाहाबाद (उ. प्र.)**

आज हर जगह अशान्ति, असुरक्षा, अविश्वास, मूल्यहीनता और घोर निराशा के काले बादल मंडरा रहे हैं। फलतः लोगों के होंठों से हंसी छुमंतर हो गई है, लोगों के दिल की कली मुरझाने लगी है। हंसने-हंसाने के अवसर-दिन-प्रतिदिन कम होते जा रहे हैं। ऐसे में आपने पूरी ईमानदारी एवं सतर्कता से अपने कुशल सम्पादकत्व का जौहर दिखाते हुए आजकल (फरवरी-91) का उत्तम एवं संग्रहणीय 'हास्य-व्यंग्य विशेषांक' निकालकर डूबते हुए दिलों को तिनके का सहारा प्रदान किया है। □

**मो. इलियास हुसैन, प्रा. एवं पो.—नारायणपुर,
मनिहारी, कटिहार।**

फिर एक बार

देश में आम चुनाव सिर पर हैं। अगले कुछ दिनों में भारत की जनता दसवीं लोकसभा का चुनाव करेगी। देखा जाए तो यह चुनाव पिछले नौ लोकसभा चुनावों से भिन्न है। कारण यह कि यह चुनाव ऐसी विषम परिस्थितियों में होने जा रहे हैं, जबकि देश एक अत्यंत ही नाजुक दौर से गुजर रहा है। एक तरफ खाड़ी संकट के कारण देश आर्थिक संकट का सामना कर रहा है, तो दूसरी तरफ साम्प्रदायिक तनाव का वातावरण है। कुछ निहित स्वार्थ जात-पांत के नाम पर आम जनता में विद्वेष फैलाने की कोशिश कर रहे हैं, तो कुछ राष्ट्र विरोधी तत्व देश को टुकड़े-टुकड़े करने का सपना देख रहे हैं। ऐसे मौके पर चाहे पत्रकार हों या साहित्यकार, छात्र हों अथवा शिक्षक, नौकरीपेशा हों या व्यापारी, हम सबका यह कर्त्तव्य है कि देश की एकता और अस्मिता की रक्षा के लिए आगे आएँ और राष्ट्र विरोधी तत्वों की चालों को विफल करने में अपना योगदान दें क्योंकि जनतंत्र में जनता की शक्ति ही सर्वोपरि है। देश की प्रगति तथा जनतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि जनता अपने अधिकारों और उत्तरदायित्वों के प्रति पूरी तरह सजग रहे।

भारत की स्वतंत्रता का श्रेय उसकी जनता को है। अतः भारत की प्रगति भी जनता के बलबूते पर ही होगी। हम अपनी जिम्मेदारी केवल सरकार या दूसरों पर सौंप कर देश को आगे नहीं ले जा सकते। यह हम सब बड़ी अच्छी तरह जानते हैं कि जब-जब भारत की एकता छिन्न-भिन्न हुई है, विदेशी ताकतों ने इसका लाभ उठाया है। इतिहास साक्षी है कि आपसी झगड़ों, छोटे-छोटे राज्यों के बीच वैमनस्य आदि का लाभ उठाकर बाहरी हमलावरों ने कितनी बार भारत पर आक्रमण किया और यहां की अतुल धन-सम्पत्ति लूट कर ले गए। आज हम पुनः उसी दौर से गुजर रहे हैं क्योंकि आज हम जातिवाद, भाषावाद और धार्मिक वाद-विवाद में उलझ गए हैं और यह आगामी खतरे की सूचना है। देश की अखंडता, एकता, शांति तथा संस्कृति और सभ्यता के सामने एक चुनौती-पूर्ण संकट मौजूद है। ऐसी स्थिति में देश की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है। हमने अपने देश की खोई हुई आजादी एकता के बल पर ही अर्जित की थी। उस समय हमने जाति-भेद, भाषा-भेद, वर्ण-भेद, धर्म-भेद और लिंग-भेद सभी कुछ भुलाकर, राष्ट्रीय पताका के नीचे एक ही प्रण किया था कि हमें स्वतंत्रता प्राप्त करनी है। भारतवासी इसी भावात्मक एकता और राष्ट्रीय सद्भावना के बल पर ही अपनी परतंत्रता की बेड़ियां काट सके। आज पुनः हमें उसी एकता की परम आवश्यकता है।

राष्ट्रीय सद्भावना की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि जातिवाद का उन्मूलन किया जाए। यह तभी संभव होगा जब समस्त जातियों एवं उपजातियों के मन में व्याप्त भेद-भाव एवं ऊंच-नीच की भावना को मिटाकर यह विश्वास पैदा करें कि हम सब की केवल एक जाति है—'मानव जाति'। न कोई बड़ा है, न कोई छोटा, हम सब समान हैं। लोगों के दिलों से साम्प्रदायिकता की भावना को निकाल कर एक-दूसरे के धर्म को इज्जत और प्रेम की नजर से देखने और 'सर्वधर्म समभाव' का दृष्टिकोण पैदा करना होगा, तभी घृणा का स्थान प्रेम तथा हिंसा का स्थान शांति ले सकेगी।

आज जब चुनाव प्रचार अपनी चरम सीमा पर है, ऐसे मौके पर अनेक निहित स्वार्थी तत्व अपने तात्कालिक लाभ के लिए जाति और धर्म का उपयोग करेंगे और जनता के मन में वैमनस्य के बीज बोने की कोशिश करेंगे। हमें ऐसी कोशिशों से न केवल सावधान रहना होगा अपितु उनकी कोशिश को नाकाम करके उनका पर्दाफाश करना होगा ताकि भविष्य में वे अपना सिर न उठा सकें।

इसमें कोई शक नहीं कि भारत की जनता आज अधिक सजग और क्रियाशील है, जो एक शुभ लक्षण है। अब उसे भेड़-बकरियों की तरह नहीं हांका जा सकता। वह अपने भविष्य के प्रति उदासीन नहीं है। आज का मतदाता अधिक प्रबुद्ध और विवेकशील है। आगामी चुनाव में वह जो भी फैसला करेगा, बहुत सोच समझ कर, देश के हित को सर्वोपरि रखकर करेगा। □

भावात्मक एकता और आन्ध्र साहित्य

प्रो. भीमसेन निर्मल

भारतीय विचारधारा की सबसे बड़ी देन उसका आध्यात्मिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण है जो अपने विभिन्न रूपों में भारतीय संस्कृति की एकता की घोषणा करता है। भारत की भावात्मक एकता का मूलाधार-स्तंभ विभिन्न भाषाओं का विपुल साहित्य है, जिसमें हमें पग-पग पर भारतीयता के दर्शन होते हैं। भाषागत एवं विषयगत जो भिन्नता दृष्टिगत होती है, वह केवल प्रयोगगत है, केवल अभिव्यक्ति के माध्यम या पद्धति पर आधारित है। किन्तु उसका हृदय एक ही है, जो भारतीय है।

समस्त भारतीय भाषाओं के समग्र अनुशीलन करने से निम्न समानताएं परिलक्षित होती हैं। सभी आधुनिक भाषाओं में साहित्य का प्रारंभ लगभग दसवीं-ग्यारहवीं शतियों में हुआ है और इन हजार वर्षों का साहित्य चार युगों में विभक्त किया जा सकता है। रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत आदि ग्रंथों का तथा इस्लामी संस्कृति के प्रसार का प्रभाव सभी भाषा-साहित्यों पर समान रूप से लक्षित होता है। मध्य युग में भक्ति आन्दोलन से प्रभावित रचनाएं प्रत्येक भाषा में दृष्टिगत होती हैं। 19वीं शती में पुनर्जागरण काल में, सांस्कृतिक अध्यात्मवाद के साथ, विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव, रोमांटिक काव्यधारा आदि समान साहित्यिक धाराओं के दर्शन होते हैं। "पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति के साथ सम्पर्क एवं संघर्ष और उनसे पुनर्जागरण युग का उदय, राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रेरणा से साहित्य में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का उत्कर्ष, साहित्य में नीतिवाद एवं सुधारवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया और नई रोमानी सौन्दर्य दृष्टि का उन्मेष, चौथे दशक में साम्यवादी विचारधारा के प्रचार से द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का प्रभाव, इलियट आदि के प्रभाव से नए जीवन की बौद्धिक कुष्ठाओं और स्वप्नों को शब्द रूप देने के नए प्रयोग और अन्त में स्वतंत्रता के बाद विश्व कल्याण की भावना से प्रेरित राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का विस्तार"—यही संक्षेप में आधुनिक भारतीय वाङ्मय के विकास की रूपरेखा है जो सभी भाषाओं में समान रूप से लक्षित होती है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय वाङ्मय अनेक भाषाओं में अभिव्यक्त एक ही विचार है। हम यहां संक्षेप में आन्ध्र प्रदेश की साहित्य-साधना का परिचय देंगे जिससे उपर्युक्त तथ्य का पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत हो।

समग्र दक्षिण भारत में आन्ध्र और समस्त दक्षिण भारतीय भाषाओं में तेलुगु—इन दोनों ने भारत की भावात्मक एकता की सिद्धि में, अति प्राचीन काल से अपना हाथ बंटाया है। भारतवर्ष के मध्य भाग में स्थित होकर, आन्ध्रों ने उत्तर और दक्षिण में

समन्वय स्थापित करने का स्तुत्य प्रयत्न किया है। आर्य और द्राविड़ भाषाओं को, साहित्यिक शैलियों को, सांस्कृतिक मर्यादाओं को समन्वित करने के प्रयास के प्रमाण हमें आन्ध्र भाषा में, साहित्य में और आन्ध्र के जनजीवन में परिलक्षित हो सकते हैं। आन्ध्रों ने संस्कृत साहित्य की अपार सेवा की है। संस्कृत के बाद, अपभ्रंश, प्राकृत और हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में अपनी शक्ति लगाकर, संकीर्ण दृष्टि से मुक्त विशाल दृष्टिकोण का परिचय दिया है। आन्ध्र के सामाजिक जीवन का सुष्ठु अध्ययन करने पर यह प्रमाणित हो जाता है कि संकुचित प्रादेशिक भावना को तजकर, आन्ध्रों ने अखंड भारत की भावना से प्रेरित होकर, भारत की भावात्मक एकता को सिद्ध करने का सराहनीय कार्य किया है।

तेलुगु भाषा और साहित्य संस्कृत भाषा—साहित्य से इतने प्रभावित हैं कि विद्वानों में यह विषय मतभेद उत्पन्न करता आया है कि तेलुगु भाषा संस्कृत-प्राकृत-जन्य है या द्राविड़ी। किन्तु अधिकतर विद्वानों का मत तेलुगु को मूल द्राविड़ी परिवार से संबद्ध, मातृ परिवार से, अन्य भाषाओं की अपेक्षा दूरीकृत और संस्कृत-प्राकृत और अपभ्रंश से अत्यधिक प्रभावित मानने की ओर है। परन्तु कब इस प्रकार हुआ और तदुपरान्त विकास क्रम कैसा रहा, इन बातों का परिचय प्राप्त करने के लिए साधन नहीं के बराबर है। 11वीं शती तक लिपिबद्ध साहित्य तो मिलता नहीं है। परन्तु कुछ लोक गीतों व शिलालेखों द्वारा तेलुगु भाषा के स्वरूप का थोड़ा-बहुत परिचय मिलता है जो नन्नयभट्ट के प्रौढ़ काव्य-रचना की पृष्ठभूमि का काम देता है। नन्नय ही तेलुगु के आदि कवि माने जाते हैं और उनसे पूर्व का युग 'अज्ञात युग' कहलाता है। इस युग से संबद्ध विषय-प्रधान कुछ शिलालेख और सिद्धि लोकगीत प्राप्त हैं।

11वीं से 13वीं शती का समय 'पुराण युग' या 'अनुवाद युग' कहलाता है। इस युग में वैदिक धर्म निष्णात महाराजाओं के प्रोत्साहन से धर्मनिष्ठ कवियों ने संस्कृत के कतिपय पुराणों का अनुवाद, बड़ी कुशलता के साथ किया है। नन्नय, भीमकवि, नन्नेचोड़, सोमनाथ, तिवकन्न, केतन्न, बद्देना, एरप्रिगड, नाचन सोमन्न, गौरन्न, त्रिपुरान्तक आदि इस युग के महाकवि हैं।

राजमहेंद्री को राजधानी बना कर, आन्ध्र प्रदेश पर राज्य करने वाले पूर्व चालुक्यवंशीय राजराजनरेन्द्र (ई. 1012—1063) की सभा में नन्नयभट्ट विद्यमान थे। उन्होंने अपनी पूर्ववर्ती भाषा एवं काव्यरचना को सुव्यवस्थित रूप देकर 'आन्ध्र

वागनुशासक' की उपाधि को सार्थक बनाया। संस्कृत शब्दों और तत्सम क्रिया रूपों का आधार लेकर उन्होंने तेलुगु भाषा को महाकाव्य की रचना के उपयुक्त बनाया। 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि' के नाम से सूत्रपद्धति में तेलुगु का व्याकरण, संस्कृत में रचा। संस्कृत महाभारत के ढाई पर्व तक ही अनुवाद कर पाए कि कालपुरुष ने उनकी लेखनी थाम दी।

नन्नय के बाद महाभारत की रचना को सम्पूर्ण करने वाले तिवक्कन्न सोमयाजी हैं। महाभारत के शेष 15 पर्वों का तिवक्कन्ना ने बड़ी ही प्रांजल शैली में अनुवाद किया है। शैली, विषयनिर्वाह, कथा प्रसंग आदि के दृष्टिकोण से तिवक्कन्ना के जोड़ का कवि नहीं है।

एराप्रगाड ने अरण्यपर्व के शेष भाग की पूर्ति की है। महाभारत की रचना करने वाले इन तीन कवियों को 'कवित्रय' कहते हैं और काव्य रचना के क्षेत्र में इन्हें आदर्श माना जाता है। आन्ध्र के साहित्य के इतिहास में कवित्रय महाभारत का अद्वितीय स्थान है और इस काव्य ने जनजीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है।

नन्नेचोड कवि के 'कुमारसंभव', पाल्कुरिक सोमनाथ के 'बसवपुराण', 'पंडिताराध्य चरित्र' आदि पर देशी काव्यधारा का विशिष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। द्विपद (हिन्दी के दोहे का समकक्षी) में रचना कर, वीर शैव सम्प्रदाय का जोरों से प्रचार करने वाले कवि सोमनाथ थे।

'रंगनाथ रामायण' द्विपद छन्द में लिखा गया अनुपम महाकाव्य है। केतना का 'देशकुमार चरित', बद्देना का 'नीतिशास्त्र मुक्तावली', मारन्न का 'मार्कंडेय पुराण', नाचन सोमन्न का 'उत्तर हरिवंश', तिप्पन्ना का 'त्रिपुरान्तकोदाहरण' आदि सुप्रसिद्ध रचनाएं हैं। 'भास्कर रामायण' चार कवियों की समष्टि रचना है।

पुराण युग के पश्चात 'काव्य युग' (14वीं से 15वीं तक) का समय आता है जिसमें कला-कौशल और रचना विधान को महत्व दिया गया। महाभारत, रामायण, हरिवंश आदि पौराणिक काव्यों के अनुवाद कर चुकने के बाद, कवियों की दृष्टि संस्कृत के अन्य काव्यों की ओर गई जिनकी रचना में वे अपने कला-कौशल को प्रदर्शित कर सकें और अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न कर सकें। इस युग के सुप्रसिद्ध कवियों में सर्वप्रथम कविसार्वभौम श्रीनाथ का नाम लिया जाता है। अनेक ग्रंथों की रचना कर, अनेक राजाओं के आश्रय में रहकर, महावैभव का उपभोग कर, इस महाकवि ने अपने प्रचण्ड तेज से, उस समय के साहित्यिक क्षेत्र को आर्तकित बनाए रखा। 'शृंगार नैषध' उनका प्रसिद्ध महाकाव्य है। 'मरूत्तराट् चरित्र', 'शालीवाहन सप्तशती', 'हरविलास', 'काशीखण्ड', 'भीमखण्ड' आदि अनेक काव्यों की रचना की है। श्रीनाथ का 'पलनाटि वीरचरित्रम्' द्विपद छंद में लिखा गया वीररस प्रधान काव्य है जिसमें आन्ध्र देश के 'पलनाडु' प्रांत के वीरों की कथा वर्णित है। कहते हैं, महाभारत के युद्ध से संतुष्ट न होकर, कौरव और पांडवों ने इन वीरों के रूप में अवतार लिया है। इन्होंने 'क्रीड़ाभिरामु' नामक वीथिनाटक की रचना भी की है।

संस्कृत महाभागवत का अनुवाद करने वाले महाकवि बम्मेर पोतन्ना का आन्ध्र साहित्य में अपूर्व महत्व है। भागवत की रचना

कर पोतन्न अमर हो गए तो उनकी लेखनी के स्पर्श से भागवत भी अमर बन गया। (पोतन्न के बाद महाभागवत का अनुवाद किसी ने भी नहीं किया है)। राज्याश्रय से दूर, खेती कर जीविका चलाते हुए इस महाकवि ने सरस और सरस शैली में भागवत की रचना की है।

जक्कन्न का 'विक्रमार्क चरित्र', अनन्तामात्य के 'भोजराजीयमु, रसाभरणमु', गौरन्न के 'हरिश्चन्द्रो पाख्यानमु', 'नवनाथ चरित्र', दुर्गाय्य का 'नासिकेतोपाख्यान', दूबगुंट नारायण कवि का 'पंचतंत्र', पिनवीरभद्र का 'शृंगार शाकुन्तल', 'जैमिनी भारतमु' आदि इस युग के विशिष्ट काव्य हैं। नदिमल्लय्य और घंट सिंगय्य नामक कवियों ने मिलकर 'प्रबोधचन्द्रोदय' और 'वराहपुराण' नामक काव्यों की रचना की है।

'पुराण युग' और 'काव्य युग' में संस्कृत के अनेकानेक पुराणों और काव्यों के जो अनुवाद हुए हैं, वे केवल अनुवाद मात्र न होकर, मौलिक रचना से प्रतीत होते हैं। देवभाषा और वैदिक धर्म पर प्रगाढ़ श्रद्धा के कारण इन कवियों ने, उन संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद करना ही देश, भाषा व धर्म की उत्कृष्ट सेवा समझी और राजाओं ने ऐसे धार्मिक काव्यों की रचना करवाना ही अमरता का साधन समझा। मूलकथा का आधारमात्र लेकर, इन महाकवियों ने अपनी प्रतिभा तथा कल्पना शक्ति से प्रौढ़ काव्यों की रचना की है। तेलुगु भाषा के महाकाव्य चम्पू पद्धति के हैं।

इस काव्य युग में आतुकूरि मोल्ल नामक कुम्हारिन ने ध्वनि प्रधान एवं सरस शैली में रामायण की रचना की है।

विजय नगर के प्रसिद्ध महाराजा श्रीकृष्णदेवराय के युग को 'प्रबंध युग' (16वीं शती से 18वीं शती तक) कहते हैं। इस युग में अनुवादात्मक रचनाओं के स्थान पर, मौलिक काव्यों की रचना होने लगी। इस युग के कवि किसी पुराण की किसी कथा को आधार बना कर, अपनी रुचि व प्रतिभा के अनुसार प्रबंध काव्य का निर्माण करते थे। पूर्ववर्ती कवि कथावस्तु को प्राधान्य देते थे तो ये कवि वर्णनों में, अलंकार विधान के निर्वाह में अपनी कुशलता दिखाते थे। रसों में शृंगार रस को प्राधान्य दिया जाने लगा।

सफल शासक होने के साथ-साथ श्रीकृष्णदेवराय महाकवि भी थे। संस्कृत में अनेक काव्यों की रचना कर, इन्होंने तेलुगु में 'आमुक्तमाल्यदा' के नाम से, वैष्णव भक्तों की कथाओं को प्रतिपादित करने के उद्देश्य से, एक महाकाव्य की रचना की है। इनकी शैली अत्यंत प्रौढ़ तथा क्लिष्ट होती है।

अल्लसानि पेद्दन्न का 'मनु चरित्र' आन्ध्र के पंचमहाकाव्यों में प्रथम स्थान का अधिकारी है। रस, भावानुकूल शैली का प्रयोग कर, रमणीय कथा-काव्य की सृष्टि की है पेद्दन्न ने। नदि तिममन्न का 'पारिजातापहरण', मल्लन्न का 'राजशेखरचरित्र', धूर्जिट का 'श्रीकालहस्तीश्वरमाहात्म्यमु', रामभद्र का 'रामाभ्युदयमु', पिंगलिसूरन्न के 'राघवपांडवीयम्' (द्वयर्थी), 'कलापूर्णोदयमु', 'प्रभावती प्रद्युम्नमु' रामराजभूषण के 'वसुचरित्र', 'हरिश्चन्द्रनलोपाख्यानमु' (द्वयर्थी), तेनालि रामकृष्ण का 'पांडुरंग माहात्म्यमु' आदि इस युग के श्रेष्ठ प्रबंध

काव्य हैं। उपरोक्त आठ कवि श्रीकृष्णदेवराय की सभा के अष्ट दिग्गज माने जाते हैं। 'कलापूर्णोदयम्' अपनी कल्पित कथावस्तु और रचनाचातुर्य के लिए विशेष प्रसिद्ध है।

यहाँ पर गोलकुण्डा के कुतुबशाही राजाओं का स्मरण करना चाहिए जिन्होंने तेलुगु काव्य रचना को यथेष्ट प्रोत्साहन दिया। इन राजाओं के आश्रय में कवियों ने शुद्धान्ध (ठेठ तेलुगु) के काव्यों की रचना की है। पोन्नकॉट तेलगन्न का 'ययातिचरित्र' प्रथम और श्रेष्ठ शुद्धान्ध काव्य है।

तालिकोट युद्ध (1564 ई.) के बाद विजयनगर साम्राज्य का पतन हो गया था। तदनन्तर आन्ध्र साहित्य का पोषण व संवर्द्धन तंजाऊर, मदुरै, पुदुक्कोट आदि सुदूर दक्षिण के आन्ध्र नायक राजाओं के राज्य में हुआ। अतः इस युग को 'दक्षिण आन्ध्र युग' कहते हैं। इस युग में प्रबन्ध युग की श्रृंगार-रस-पोषण की भावना अपनी पराकाष्ठा को पहुँची और श्रृंगार रस प्रधान—(कहीं-कहीं अश्लीलता की हद कर दी गई है)—काव्यों की रचना अधिक मात्रा में हुई। इस युग में काव्य रचना के अतिरिक्त गीत, वचन, यक्षगान आदि विविध देशी साहित्य-प्रक्रियाओं की सर्जना की गई है।

तंजाऊर के नायक राजाओं में रघुनाथ नायक का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। शासन कुशलता में, साहित्य प्रेम में यह राजा श्रीकृष्णदेवराय के समकक्षी हैं। इन्होंने संस्कृत और तेलुगु में अनेक काव्यों की रचना की है और अनेक सुप्रसिद्ध कवियों को आश्रय दिया है। इनकी सभा में चेमकूर वेंकट कवि ने 'सारंगधर चरित्र' और 'विजय विलास' की रचना की है। कृष्णध्वरि ने अनेक काव्यों की रचना कर रघुनाथ-भूपाल को समर्पित किया है। रंगाजम्म नामक विदुषी ने पांच प्रबन्ध काव्य, एक यक्षगान और अनेक मुक्तक पदों की रचना कर, विशेष ख्याति प्राप्त की है। स्त्री कवियों में मुद्दु पल्लि का नाम भी प्रसिद्ध है, जिसने 'राधिका सान्त्वनम्' नामक श्रृंगार-रस-प्रधान काव्य की रचना की है।

इस युग के कवियों में क्षेत्रय्य और त्यागराज का उल्लेख होना चाहिए। क्षेत्रय्य ने भगवान मोव्व (एक ग्राम का नाम)—गोपाल पर अनेक सुन्दर पदों की रचना की है जो भक्ति और श्रृंगार की भावनाओं से ओत-प्रोत हैं। त्यागराज ने रामभक्ति में विभोर होकर जो पद लिखे हैं (जिन्हें कृतियाँ कहते हैं), वे मानों कर्नाटक संगीत के प्राण हैं। क्षेत्रय्य अनेक राजाओं के आश्रय में रहकर, माधुर्य-भक्ति के पदों की रचना करते थे, तो व्यागय्य 'निधि' (धन दौलत) को ठुकरा कर, भक्तिभाव में तल्लीन हो, पद गाते थे।

समुखम् वेंकट कृष्णप्प के 'अहल्यासंक्रंदनीयम्' व 'राधामाधव-संवादम्' शेषम् वेंकटपति का 'ताराशशांकम्' उत्कट श्रृंगारिक काव्य हैं। मैसूर राज्य के पालवेकरि कदिरिपति की 'शुकसप्तति' में उस समय की सामाजिक दशा का स्पष्ट चित्रण मिलता है। अनेक काव्य ग्रंथों के कर्ता कविसार्वभौम कूचिमर्चि तिम्म-कवि के शुद्धान्ध काव्य 'नीलासुन्दरी परिणयम्' व 'अच्चतेनुगु रामायणम्' का तेलुगु साहित्य में विशिष्ट स्थान है।

भर्तृहरि के शतकों के एनुगु लक्ष्मण कवि, एलकूच बालसरस्वती, पुष्पगिरि तिम्मन नामक तीन कवियों ने अपनी-अपनी शैली में अनुवाद प्रस्तुत किए हैं।

महायोगी वेमना ने वैराग्यपरक पद्य की रचना कर, सामाजिक कुरीतियों व बाह्याडम्बरों का खण्डन करके, सच्ची भक्ति एवं सरल जीवन का उपदेश दिया है।

इस युग में तंजाऊर, मदुरा से लेकर तेलंगाने तक के विस्तृत देश में साहित्य की जो सृष्टि हुई है, वह अपार है।

अन्य भारतीय भाषाओं के समान ही 19वीं शती के उत्तरार्द्ध से तेलुगु साहित्य का आधुनिक युग आरंभ होता है। एक नई जागृति के कारण समस्त देश में एक नवचेतना व्याप्त हो गई थी। वीरेशलिंगम पन्तुलु को आधुनिक युग का जन्मदाता माना जाता है, जिन्होंने अनेक नवीन साहित्य-विधाओं का श्रीगणेश किया। सामाजिक सुधार के आन्दोलन के साथ, उन्होंने कविता को रूढ़िमुक्त कर, स्वच्छन्दता प्रदान की।

इस प्रकार एक हजार वर्षों के तेलुगु साहित्य का अध्ययन करने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि तेलुगु साहित्य का विकास, अपनी विशिष्टताओं को बनाए रखते हुए भी, भारतीय साहित्य के अंग के रूप में ही हुआ है। भाव पक्ष और कला पक्ष की दृष्टि से पग-पग पर अनेक समानताएं दृष्टिगोचर होती हैं। भक्ति परक साहित्य में पोतन्न और त्यागय्य की तुलना तुलसी और सूर से और वेमना की तुलना कबीर से की जा सकती है। कहीं-कहीं बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव लक्षित होता है। साहित्यिक इतिहास, परिचय, तुलनात्मक अध्ययन, तुलनात्मक अनुसंधान, अंतः साहित्यिक गोष्ठियाँ आदि की सम्यक् व्यवस्था द्वारा पारस्परिक आदान-प्रदान की सुविधा हो तो इस बात के पुष्ट प्रमाण प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे कि भारत की प्रत्येक भाषा का साहित्य, भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति का एक विशिष्ट रूप है। भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए सांस्कृतिक एकता का आधार अनिवार्य है और सांस्कृतिक एकता का सबसे बड़ा एवं स्थायी आधार है साहित्य। अतः परस्पर के भाषा साहित्य के सम्यक् अध्ययन से भावात्मक एकता की भावना को बल मिल सकेगा। □

गांधी नगर, हैदराबाद-500380

'आजकल' मंगाने का पता

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाउस
नई दिल्ली-110001

वार्षिक: 30.00 रु.

द्विवार्षिक: 54.00 रु.

त्रिवार्षिक: 72.00 रु.

चेक/बैंक ड्राफ्ट अथवा मनीऑर्डर

व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग के नाम देय होना चाहिए।

बौद्ध दर्शन पर आधारित तमिल महाकाव्य मणिमेखला

एस. एन. गणेशन

प्राचीन तमिल साहित्य की अनर्घ निधियों में एक है 'मणिमेखला' महाकाव्य। 'मणिमेखला' तमिल के पंच-महाकाव्यों में दूसरा है। ये पांच महाकाव्य हैं—चिलप्पतिकारम् (नूपुर कथा), मणिमेकलै (मणिमेखला), जीवक चिन्तामणि, कुण्डल केशि और वलैयापति। इनमें अन्तिम दोनों मूल रूप में अप्राप्य हैं। 'चिलप्पतिकारम्' और 'मणिमेखला' की कथाएं परस्पर सम्बद्ध होने के कारण दोनों को एक 'काव्य द्वय' माना जाता है। प्राचीन तमिल देश के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का व्यापक चित्र प्रस्तुत करने के कारण और साथ-साथ शाश्वत मानवीय मूल्यों की खोज करने के कारण इन्हें उत्कृष्ट काव्य माना जाता है। सृजन-प्रतिभा की दृष्टि से देखा जाए तो भी इन्हें, अनुपम काव्य माना जा सकता है। 'मणिमेखला' प्राचीन तमिलनाडु के सांस्कृतिक जीवन तथा धार्मिक मूल्यों का एक दस्तावेज है, जो काव्य-रूप में समाहित होकर विशेष आकर्षक बने हैं।

'मणिमेखला' का लेखक है कूलवाणिकन चीत्तलै चात्तनार। कूलवाणिकन (अनाज व्यापारी) शब्द से अनुमान किया जाता है कि वे स्वयं अनाज व्यापारी थे, या व्यापारियों के परिवार में जन्मे थे। 'चीत्तलै' स्थान-नाम हो सकता है, जैसे कुषित्तलै, चेत्तलै आदि। लेखक के जीवन के बारे में अधिक सामग्री नहीं मिलती। चिलप्पतिकारम् के 'पदिकम्' (प्रस्तावना) से ज्ञात होता है कि वे चिलप्पतिकारम् के लेखक इलंगो अडिकल् के समकालीन थे। मणिमेखला के आमुख से ज्ञात होता है कि चात्तनार करुवूर में चेर राजा चेंगुट्टुवन के पास गए थे और वहीं चेंगुट्टुवन के ज्येष्ठ भ्राता इलंगो को चिलप्पतिकारम् की कथा सुनाकर उस पर काव्य लिखने का आग्रह किया। इसके बाद उन्होंने स्वयं परवर्ती घटनाओं के आधार पर 'मणिमेखला' की रचना की। प्रथानुसार इलंगों के मुंह से 'चिलप्पतिकारम्' सुनकर चात्तनार ने अनुमोदन किया था और चात्तनार से 'मणिमेखला' की कथा सुनकर इलंगो ने।

'मणिमेखला' में प्रस्तुत दार्शनिक विचारों से निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि चात्तनार बौद्ध धर्म के अनुयायी थे, पर अन्य धर्मों तथा दार्शनिकवादों के अभिज्ञ थे। संपूर्ण काव्य में उनका प्रकांड पांडित्य, धार्मिक सहिष्णुता एवं मानवतावादी दृष्टि अभिव्यक्त हुई हैं।

अन्य प्राचीन काव्यों की तरह 'मणिमेखला' का काल भी अत्यन्त विवादास्पद रहा है। चात्तनार और इलंगो के समकालीन होने से दोनों काव्यों का काल भी लगभग समान होना चाहिए।

किन्तु 'चिलप्पतिकारम्' का काल भी असादिग्ध नहीं है। इन काव्यों में आई हुई कुछ ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर कुछ निर्णय किया जा सकता है।

'चिलप्पतिकारम्' के अनुसार (गाथा 30, पं. 160) जब चेर राजा चेंगुट्टुवन ने कण्णकी-प्रतिमा स्थापित की, तब उस पर्व में सम्मिलित होने के लिए सिंहल के राजा गजबाहु आए थे। सिंहल के राजवंशों का इतिहास प्रस्तुत करने वाले 'महावंश' के अनुसार गजबाहु का काल ईस्वी दूसरी शताब्दी है। पर्व सम्बन्धी विवरण से ज्योतिष की गणना करके रामचंद्र दीक्षितर ने (चिलप्पतिकारम् अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका) इसका काल ई. 173-74 माना है। आन्ध्र शातकर्णी, चोल राजा करिकालन आदि के जो उल्लेख आए हैं, उनके आधार पर अन्य विद्वानों ने भी 'चिलप्पतिकारम्' को ई. प्रथम शती का माना है। लेकिन प्रो. वैयापुरिपिल्लै ने संस्कृत शब्दों के अनुपात, 'पंचतंत्र' की एक कथा का उल्लेख आदि के आधार पर ईस्वी सातवीं शताब्दी की रचना माना है। किन्तु शैव धर्म के उत्कर्ष के उस काल में जैन धर्म से संबन्धित इस काव्य की रचना मानने को अन्य विद्वान सहमत नहीं हैं।

स्वयं 'मणिमेखला' में आए कुछ प्रसंगों से भी कुछ निर्णय किया जा सकता है। इसमें प्रस्तुत दर्शन का सम्बन्ध बौद्ध दार्शनिक दिड्ढनाग के 'न्याय प्रवेश' और 'प्रमाण समुच्चय' से माना जाता है। लेकिन इन ग्रंथों के संस्कृत मूल नहीं मिलते, तिब्बती रूपान्तर ही मिलते हैं। दूसरी बात यह है कि दिड्ढनाग की कड़ी आलोचना वाचस्पति मिश्र, कुमारिल भट्ट, पार्थसारथि मिश्र, उदयणाचार्य, धर्म कीर्ति आदि से हुई थी। ऐसी दशा में मणिमेखलाकार ने उनके विचारों को क्यों स्वीकृत किया यह प्रश्न उठता है। इतिहासकार के. के. पिल्लै के अनुसार वज्रनंदि के 'द्रविड़ संघ' स्थापना ई. 47 में हुई और उस समय से बौद्ध धर्म का उत्कर्ष हुआ होगा। मणिमेखला का एक मुख्य पात्र अरवण भिक्षु को धर्म कीर्ति माना जाता है। (अरम-धर्म), जिनका काल ई. चौथी, पांचवीं शताब्दी है। पर यह संदेह है कि मूल नाम अरवण था या धर्म कीर्ति। भिन्न भाषाओं में समानार्थक नामों का होना साधारण बात थी।

इन सबके आधार पर माना जा सकता है 'मणिमेखला' की रचना ई. चौथी-पांचवीं शताब्दी में हुई होगी।

विषय, रूप और दृष्टि से मणिमेखला सर्वथा मौलिक महाकाव्य है। इसका काव्य विषय किसी पौराणिक अथवा अन्य प्रसिद्ध कथा पर आधारित (उपजीव्य) न होकर पूर्णतः उत्पाद्य है। यद्यपि कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों तथा घटनाओं के उल्लेख

आ गए हैं, तो भी कथा-विकास में उनका विशेष महत्व नहीं है। 'चिलप्पतिकारम्' के आगे की कथा 'मणिमेखला' में कही गई है। 'चिलप्पतिकारम्' के नायक कोवलन ने गणिका माधवी पर अनुरक्त होकर अपनी सारी सम्पत्ति नष्ट कर दी और उसे तजकर पत्नी-सहित मदुरै जाकर व्यापार करना चाहा। लेकिन चोरी के सन्देह से वहां उसे राजा द्वारा मृत्युदण्ड दिया गया और कण्णकी ने कोप से अपना स्तन उमोठ फेंका और मदुरा को जला कर भस्म कर दिया। फिर वह चेर देश गई और एक पहाड़ी पर, जनों के देखते सन्देह स्वर्ग सिधारी।

कोवलन द्वारा परित्यक्त माधवी, कवियों द्वारा उपेक्षित नायिका नहीं बनी। उसकी और उससे जन्मी माधवी की कथा के आधार पर चात्तनार ने यह अमर काव्य लिखा है।

गणिका जीवन के अपने अनुभवों से व्याकुल माधवी ने निश्चय कर लिया कि अपनी और कोवलन की पुत्री मणिमेखला को गणिका जीवन से मुक्त करके तपस्विनी बनाऊंगी। पुहार नगर में जहां वह रहती थीं, परम्परानुसार इन्द्रोत्सव मनाने का निश्चय किया गया। हाथी पर चढ़े विज्ञापक ने भेरी बजाकर इसकी घोषणा की और लोगों को आदेश दिया कि वे नगर का अलंकरण करें और मानव लोक तथा देवलोक से आने वाले लोगों से सद् व्यवहार करें। सब की आशा थी कि मणिमेखला का नृत्य होगा। लेकिन ज्ञात हुआ कि वह एक जैनाश्रम में प्रविष्ट हो गई हैं। माधवी की माता चित्रावती ने उसे समझाया कि यह कुलधर्म नहीं है, पर माधवी ने उत्तर दे दिया कि वह महासती कण्णकी की पुत्री मणिमेखला को (वह यही मानती है मणिमेखला रिश्ते से कण्णकी की पुत्री है) गणिका-जीवन के साथ बाध्य नहीं करेगी।

एक बार मणिमेखला पूजा के पुष्प लाने के लिए उपवन गई। उसकी रक्षा के लिए सखी सुधमती भी साथ गई। यह बात जानकर राजकुमार उदयकुमार वहां आया। वह मणिमेखला के सौंदर्य पर मुग्ध हो गया और उसे अपने रथ पर चढ़ाकर ले जाना चाहता था। उसके रथ के आने की ध्वनि सुनकर मणिमेखला घबरा गई। सुधमती ने उसे उपवन में निर्मित एक स्फटिक भवन में प्रविष्ट कराकर बंद कर दिया और बाहर अकेली खड़ी रही। उदयकुमार ने आकर मणिमेखला के सौंदर्य की प्रशंसा करते हुए अपना इरादा बता दिया। सुधमती ने उसकी निन्दा करके उपदेश दिया—

"सुनो रणजयी वीर,
कर्मफल से प्राप्त
और कर्मों का क्षेत्र है यह देह,
तज दें सजाएं तो, मात्र मांस पिंड है।
जो मिट जाती है वृद्धता में,
निवास है यह महारोगों का,
आवास है, आसक्तियों का,
भाजन है घोर अपराधों का,
निवास है बिल में दबे रहते सर्प जैसे क्रोध का।
मुक्त नहीं होती है देह
दुःख तथा चिन्ता से, मोह से, व्यथा से,
यही है मानव देह,
सोचकर देखो इसे।"

जब वह इस तरह उपदेश दे रही थी, तभी स्फटिक भवन में मणिमेखला का रूप दिखाई पड़ा और कुमार उसे देख मुग्ध हो गया। उसने प्रतिज्ञा की कि मैं चित्रावती द्वारा इसे प्राप्त करूंगा। मणिमेखला भी एक निमिष के लिए काम-विवश हो गई, पर शीघ्र ही उसने अपने आपको संभाल लिया। उदयकुमार के जाने के बाद वह बाहर आई। सन्ध्या के समय जब पुहार नगरी एक युवती रमणी के समान सज्जित थी तब मणिमेखला की कुलदेवी मणिमेखला देवी वहां उपस्थित हुई। जब सुधमती निद्रा निमग्न हुई, तब उसने मणिमेखला को उठाकर गगनमार्ग से ले जाकर मणिपल्लव द्वीप में पहुंचा दिया।

मणिमेखला देवी लौटकर उदयकुमार के पास आई और उसे नीति मार्ग से जाने का उपदेश दिया। सुधमती को जगाकर उसने सारी बातें बता दीं और कहा कि श्री बुद्ध के चरण कमलों से मिलने का भाग्य-प्राप्त मणिमेखला बुद्ध पीठिका से अपने पूर्व जन्मों की कथा जानकर यहां वापस आएगी। सुधमती उसके आदेशानुसार चक्रवाल कोष्ठ में 'लोकधर्म' नामक मण्डप में गई जहां स्तंभों पर प्रतिष्ठित देवताओं में से एक ने उसे उसकी पूर्व कथा बता दी। उसने सारी कथा माधवी को भी बता दी जिससे वह भी बहुत चिन्तित हुई।

उधर मणिपल्लव में मणिमेखला जाग उठी और विभ्रमित होकर सुधमती की खोज करने लगी। इन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित बुद्ध-चरण-पीठिका उसकी दृष्टि में पड़ी। पीठिका की प्रदक्षिणा-वन्दना करने पर उसे पूर्व जन्म की बातें याद आईं। मणिमेखला देवी ने प्रत्यक्ष होकर उसे उसके पति की कथा बता दी और भविष्य के बारे में भी कह दिया। पूर्व जन्म में वह यशोधर नगर के राजा रविवर्मा की पुत्री लक्ष्मी थी। और गांधार राजा के पुत्र राहुल की पत्नी। अपने किए पाप कर्म के कारण राहुल दृष्टिविष नामक सर्प के दंश से मर गया था। उसकी चिता में कूदकर लक्ष्मी ने भी देह तजी। वही राहुल अब उदयकुमार के रूप में जन्मा है। मणिमेखला ने साधुचक्र नामक बौद्ध सिद्ध का स्वागतोपचार किया था, इस पुण्य से उसे इस जन्म में भव-बन्धन से मुक्ति का भाग्य मिला है। पूर्व जन्म की उसकी माता और उसकी बहन ने, श्री बुद्ध के पदचिह्नांकित 'पदपंकज गिरि' के दर्शन के लिए जाने वाले सिद्ध अरवण के आदेश से उस गिरि का वन्दन करने से इस जन्म में माधवी और सुधमती के रूप में जन्म लिया है।

पूर्व कथा कहने के बाद देवी ने यह भविष्य कथन भी किया कि मणिमेखला विविध धर्मों के तत्त्व जानकर बौद्ध धर्म स्वीकृत करेगी और लोकमंगल के कार्य करती हुई निर्वाण प्राप्त करेगी। देवी ने उसे दो मंत्र प्रदान किए, जिनमें एक से वह इच्छानुसार रूप धारण कर सकेगी और दूसरे के सहारे गगन-पथ से गमन कर सकेगी। फिर मानव को सदा व्यथित करने वाली भूख से मुक्त होने का मंत्र भी उसे देकर देवी गगन मार्ग से चली गई।

मणिमेखला द्वीप में उद्यानों को देखती हुई जा रही थी। इन्द्र की आज्ञा से द्वीप की रक्षा करने वाली द्वीपतिलका नामक देवी ने प्रत्यक्ष होकर उसकी सारी बातें जान लीं और उसे बता दिया कि वहां के 'गोमुखी' सरोवर से वैशाख पूर्णिमा के दिन 'अमृत सुरभि' नामक अक्षय पात्र प्रकट होगा और वह तुम्हारे हाथ आ जाएगा।

"उसमें निक्षिप्त होगी जो
जीवन की महा-औषधि,
दुखा देगी लेने वालों के कर,
होगी नहीं पर समाप्त कभी।

तुम उसे ले जाकर प्राणियों के भूख नामक महारोग को मिटाने का
पुण्य कार्य करती रहो।" मणिमेखला ने प्रण किया—

आंधी धूप को सहते,
क़तर नयनों से धूरेते,
कर्मफल से भटकते,
अकिंचन जन हैं अनेक जग में।
अपने जन्मे बालक का मुख देख तरसकर
मधुर पय स्रवण करते माता के स्तन जैसे
इस विव्य पात्र के वक्ष से
देकर जीवन की औषधि
पालूंगी उनको मैं माता होकर।"

फिर द्वीपतिलका को प्रमाण करके मणिमेखला गगन मार्ग से
पुहार गई और माधवी तथा सुधमती की चिन्ता दूर करके सिद्ध
अरवण के पास गई। अरवणसिद्ध ने उसे बताया कि संसार में धर्म
का विलोप हो गया है, धर्म की बात कोई कानों से सुनता भी नहीं।
जब एक चरम दशा आ जाएगी तब बुद्धदेव अवतरित होंगे। अब
तुम्हें इस पात्र से भूखों की भूख मिटाते रहना चाहिए और
धर्मोपदेश से उनके सुधार का प्रयत्न करना चाहिए, भले ही
उसमें सफलता बहुत धीरे मिले। (इस कथन के आधार पर कहा
जाता है कि 'मणिमेखला' बुद्ध-जन्म के पहले की रचना है। पर
इसे एक काव्य-रूढ़ि मानना अधिक संगत होगा।)

फिर अरवण ने अमृत सुरभि की कथा सुना दी। काशी के एक
ब्राह्मण अर्पचिक की पत्नी शाली, चरित्र से पतित होकर गर्भिणी
हुई। पाप-मुक्ति के विचार से वह कन्याकुमारी जाने वाली थी।
रास्ते में एक पुत्र को जन्म देकर उसने तज दिया। एक गाय ने
शिशु को दूध पिलाकर सात दिन पोसा, जिससे उसका नाम
'आपुत्र' (गोपुत्र) पड़ा। बाद में इलंपूति नामक एक ब्राह्मण ने
उसका पालन किया। बड़ा होने पर उसने यज्ञ-बलि के लिए
सज्जित एक गाय को चुराकर बचाया। लोगों ने उसकी निन्दा की
और उसके भिक्षा-पात्र में अन्न के बदले में पत्थर-ढेले डाले।
व्यथित होकर वह दक्षिण मदुरा गया और चिन्ता देवी (सरस्वती)
के मंदिर में ठहरा। भिक्षा लेकर वह परोपकार करता रहा। चिन्ता
देवी ने प्रसन्न होकर उसे 'अमृत सुरभि' नामक अक्षय पात्र प्रदान
किया। उससे वह सब की भूख मिटाने लगा। इससे इन्द्र ने
इश्यावश नियमित रूप में वर्षा करके देश को समृद्ध बना दिया,
जिससे आपुत्र से अन्न लेने वाला कोई न रहा। वह मंदिर तजकर
जहाज से मणिपल्लव द्वीप आया। गोमुखी सरोवर में पात्र को
निक्षिप्त कर उसने स्वयं अनशन कर प्राण त्याग किया। उसने
यह आकांक्षा की थी कि अमृत सुरभि वैशाख पूर्णिमा को बाहर
निकल आए और वहां जो दिखाई पड़े उसे मिले। इसी प्रकार
मणिमेखला को अब अक्षय पात्र मिल गया।

उसने जावक राज्य जाकर वहां की महा पतिव्रता आदिरा से
प्रथम भिक्षा ग्रहण की और लोगों की भूख मिटाने लगी।

कायचंडिका नामक विद्याधरी, जो एक मुनि के खाने के फल को
कुचलने से उनके शाप से 'गजाग्नि' नामक अमिट भूख के रोग से
पीड़ित थी, वह अब मणिमेखला से अन्न पाकर रोगमुक्त हो गई।
मणिमेखला 'लोक धर्म' मण्डप में सब की भूख मिटाते हुए रहने
लगी।

उधर चित्रावती ने, जो मणिमेखला के तपस्विनी वेष धारण
करने और भिक्षा पात्र ग्रहण करने से अत्यधिक चिन्तित थी प्रण
किया कि मैं उससे यह भिक्षुणी वेश छुड़वा दूंगी और पात्र किसी
भिक्षारी को दिलवा दूंगी। उसने उदयकुमार को सारी बातें बता
दीं। उदयकुमार ने प्रण किया कि किसी तरह मणिमेखला को
प्राप्त करूंगा। राजकुमार ने मणिमेखला से मिलकर अनुरोध
किया, तो मणिमेखला ने उसे पूर्व जन्म का अपना पति मानकर
उसकी वन्दना की, पर बता दिया कि "जन्म लेना, वृद्ध होना,
रोगी होना और मरना शरीर धर्म है, अतः मैंने धर्म मार्ग स्वीकृत
किया है।" यह कहकर वह मण्डप के अन्दर चली गई और मंत्र
द्वारा कायचंडिका का रूप लेकर पात्र सहित बाहर निकल गई।
कुमार ने सोचा कि मणिमेखला पात्र कायचंडिका के हाथ देकर
अन्दर छिपी बैठी है। उसने चित्रावती से पूछा तो स्तंभ पर
प्रतिष्ठित एक देवता ने उसे यह लालसा छोड़ने का उपदेश दिया।
फिर भी उसने कायचंडिका के वेश की मणिमेखला का पीछा
किया। शाप काल के बाद भी कायचंडिका के न लौटने से चिन्तित
विद्याधर उसकी खोज में आया, तो उसने राजकुमार को उसका
पीछा करते देखा। क्रोध से उसने कुमार को मार डाला। इसे
जानकर रानी ने मणिमेखला को पुत्र की मृत्यु का कारण समझकर
कारावास दिया और तरह-तरह से तंग करती रही। लेकिन इन
सबका मणिमेखला पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता देख उसे मुक्त
करा दिया। मणिमेखला जावक राज्य जाकर वहां के राजा पुण्य
राज के साथ फिर मणिपल्लव पहुंची। यहां पुण्यराज को भी
पूर्व-जन्म-कथा ज्ञात हुई। वह पूर्व जन्म में आपुत्र ही था।
मणिमेखला ने उसे स्वीकृत न देखकर जनहित देखने का उपदेश
दिया और उसे जावक भेजकर स्वयं वंची नगर गई। वहां उसने
कोवलन और कण्णकी की प्रतिमाओं की वन्दना की तो कण्णकी
की प्रतिमा ने उसे अपनी कथा बता दी। फिर उसने कहा कि
मधुरा को जलाने के पाप से मुक्त होने के लिए मैं कपिल नगर में
जन्म लेकर बुद्ध धर्म-तत्त्व सुनूंगी। तुम वंची नगर में विविध
धर्माचार्यों के उपदेश सुनो। नारी वेश में जाओगी तो वे तुम्हें
इसके योग्य नहीं मानेंगे, अतः पुरुष वेष में जाओ। मणिमेखला ने
भी पुरुष तपस्वी के वेष में जाकर आचार्यों से प्रमाण, शैव, ब्रह्म,
वैष्णव, वेद, आजीवक, निर्ग्रन्थ, सांख्य, वैशेषिक, भूतवाद सब के
सार तत्वों का श्रवण किया। पर इन सब से उसे सन्तोष नहीं
हुआ। अतः वह कांची नगर गई। पुहार नगर के सागर में निमग्न
हो जाने से अरवण, माधवी और सुधमती भी कांची गए। वहां
उन्होंने सत्यासत्य का परीक्षण कर जानने के लिए प्रमाणवाद का
परिचय देकर और बुद्ध धर्म के सार तत्वों का उपदेश देकर ज्ञान
दीप प्रदीप्त कर दिया। मणिमेखला भी भवबन्धन के कारण भूत
काम, क्रोध और माया को तजने और जीवन के सूक्ष्म तत्व
जानकर अनासक्ति मैत्री, करुणा और मुदिता भावों को ग्रहण
करने के उपदेश सुनकर भवबन्धन से मुक्ति के लिए व्रतानुष्ठान
तथा तपस्विता में लग गई।

मणिमेखला की यह कथा स्वयं पर्याप्त संकुल और रोचक है। साथ-साथ अनेक उपकथाओं के कारण कथा अधिक जटिल बनी है। असंख्य लौकिक-अलौकिक घटनाओं के भूल-भुलैया के बीच में भी एक स्पष्ट दार्शनिक तत्व का क्रमिक विकास और अपने आपसे तथा बाह्य शक्तियों से संघर्ष करते हुए जीवन के सार तत्व की खोज में लगी हुई मणिमेखला के संवेदना-लोक का उद्घाटन, ऐसे तत्व हैं, जो काव्य को गरिमा प्रदान करते हैं। पहले से एक सुनिश्चित जीवन मूल्य की प्रतिष्ठा की गई है, तो दूसरे से उसका काव्य-मूल्य सुरक्षित हुआ है।

मौलिक महाकाव्य

विषय और शैली की दृष्टि से मणिमेखला सर्वथा मौलिक महाकाव्य है। विषय किसी पौराणिक या अन्य प्रचलित कथा पर आधारित न होकर पूर्णतः उत्पाद्य है। लौकिक-अलौकिक घटनाओं से लेखक के यथार्थ बोध और कल्पना-समृद्धि का परिचय मिलता है। एक महान या विशिष्ट पुरुष को मुख्य पात्र (नायक) न बनाकर एक गणिका-पुत्री मणिमेखला को नायिका बनाने में भी कवि की मौलिकता द्रष्टव्य है। ऐसा कोई पुरुष पात्र भी नहीं है, जिसका चरित्र संपूर्ण काव्य में व्याप्त हो। निरन्तर कष्ट सहती, अपने से और संसारिक यातनाओं से संघर्ष करती हुई और प्रलोभनों पर विजय पाती हुई मणिमेखला का चरित्र अत्यन्त उदात्त बना है। तापस-वृत्ति ग्रहण करने पर भी वह निवृत्ति का नहीं, प्रवृत्ति का ही संदेश देती है। स्वहित से ऊपर परहित को मानने का भारतीय आदर्श उसमें है।

तमिल का प्राचीन साहित्य बहुत कुछ मानव और मानवता का साहित्य रहा है। लौकिक जीवन के यथार्थ और आदर्श ही उनके विषय हैं। 'मणिमेखला' सर्वप्रथम कृति है, जो दार्शनिक आधार पर रचित है। जीवन के आत्यन्तिक लक्ष्य का अन्वेषण तथा शाश्वत मानवीय मूल्य की स्थापना उसके उद्देश्य हैं। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि भूख को मानवता के महारोग के रूप में पहचानकर प्राणिमात्र की भूख के निवारण को मानव धर्म मानने वाला यह काव्य अनात्मवादी और निरीश्वरवादी हो। यह बौद्ध धर्म का मूल सिद्धान्त भी है।

बौद्ध धर्म के ही सिद्धान्तानुसार जीवन की व्याख्या करके उसका चरम लक्ष्य दिखाया गया है। अविद्या से संजात कर्म, जीवन, रोग, मरण आदि की व्याख्या करके कर्म श्रृंखला से मुक्त होने का उपाय बताया गया है—

अविद्या नष्ट हो, तो नष्ट होगा कर्म,
कर्म नष्ट हो, तो नष्ट होगी चेतना
चेतना नष्ट हो, तो नष्ट होगा अरूप-रूप

X X X

आसक्ति नष्ट हो तो, नष्ट होगी कर्म श्रृंखला,
कर्म श्रृंखला नष्ट हो तो, नष्ट होगा भव,
भव नष्ट होगा तो, नष्ट होगा जन्म
जन्म नष्ट होगा तो
नष्ट होंगे रोग, वार्द्धक्य, मरण, यातना
रोदन, चिन्ता, निष्क्रियता तथा अनन्त दुःख,
होती है इसी तरह मुक्ति।

जीवन तत्त्व के इस तरह गहन सत्यों को काव्य-सहज सरसता के साथ प्रस्तुत करने में ही मणिमेखला का आकर्षण है।

सांस्कृतिक जीवन की झांकियां

तमिल देश के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का एक विस्तृत परिदृश्य 'मणिमेखला' में प्राप्य है। पुहार नगर ('काविरिप्पूम्पट्टिनम्') वंची नगर और कांची नगर से सम्बन्धित कथा होने से इन नगरों के दृश्यों और जीवन की अनेक झांकियां मिलती हैं। पुहार नगर का इन्द्रोत्सव, माधवी की नृत्य शिक्षा, विविध उपवन, पुहार की सन्ध्या, विविध कोष्ठ, विविध कलाएं, देवी-देवता, लौकिक आचरण आदि का बारीकी से जो वर्णन किया गया है, उससे सामयिक जीवन का सजीव रूप सामने आ जाता है। वेश्या धर्म से राजा धर्म तक, गृहस्थ-धर्म से तापस धर्म तक, विस्तृत चर्चा के विषय बने हैं। विविध जन्मों की घटनाएं, कथा में समाविष्ट की गई हैं। विद्याधरों तथा देवी-देवताओं का मानवों की तरह आवागमन होता है, मंत्रों के बल गगन संचरण और रूप परिवर्तन होते हैं, स्तंभों पर प्रतिष्ठित देवता पूर्व और भविष्य कथन करते हैं—ऐसी अनेक कल्पित घटनाओं से एक मिथकीय वातावरण बन जाता है। इन असंभव तत्वों के द्वारा भी जीवन के कुछ वास्तविक तत्वों की ओर संकेत किया गया है।

नारी चरित्र का जो रूप प्रस्तुत किया गया है, वह अनुपम है। 'मणिमेखला' चरम सहनशीलता समन्वित पतिव्रत्य का आदर्श प्रस्तुत नहीं करती, पर वह तत्कालीन सामाजिक मान्यताओं का उल्लंघन कर, जीवन की विविध समस्याओं के बीच में जूझकर कुछ उदात्त मूल्यों की खोज करने वाली महामानवी हैं। साधना को जीवन का आत्यन्तिक लक्ष्य मानने पर भी प्राणियों की व्यथा मिटाने को अपना धर्म मानने वाली यह नायिका कवि की अपूर्व कल्पना है।

मानवीय संवेदनाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति, सांस्कृतिक जीवन का परिदृशात्मक चित्रण तथा उन्नत जीवन मूल्यों के कारण ही मणिमेखला एक कालजयी कृति और तमिल साहित्य की अनर्घ निधि बनी हैं। □

(निबंध में दिए गए उद्धरण मद्रास विश्वविद्यालय से प्रकाशित मणिमेखला अनुवाद से हैं)

मद्रास विश्वविद्यालय,
मेरीना, मद्रास-600005



आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की पुण्य तिथि 19 मई के अवसर पर

अनामदास का पोथा

मानवीय जिजीविषा की कहानी

डा. माजदा असद

अनामदास का पोथा' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का अंतिम उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने संसार को, संसार की परिस्थितियों को, घटनाओं को और स्वरूप को विशेष ढंग से दिखाया है। यह मानवीय जिजीविषा की कहानी है, क्योंकि जिजीविषा का संबंध जीवन से है और जीवन को सुखी बनाने की प्रेरणा इस उपन्यास में निरंतर मिलती है। इस उपन्यास के माध्यम से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने पाठकों के सामने विशेष संदेश रखे हैं जिनमें मानवीयता, सेवा, तपस्या, संकल्प, आत्म-विश्वास, प्रेम, सत्य, शिष्टाचार, सत्संग, स्वाध्याय आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

इस उपन्यास में सेवा का वर्णन अनेक बार लेखक ने किया है। "शुभे मैंने वृद्ध लोगों से सुना है कि आर्त्त और विपन्न लोगों की सेवा करना धर्म है। मैं तो धर्म की ही बात कह रहा हूँ।"—पृ. 26 यहाँ आचार्यवर सेवा भाव को धर्म के साथ जोड़ देते हैं और साथ ही यह भी कहते हैं कि सेवा भाव की शिक्षा का उपदेश बड़ों से भी प्राप्त हुआ है—

"अहंकार सेवा की महिमा को ही कम नहीं करता, वह सेवा को सेवा ही नहीं रहने देता।" (पृ. 78) सेवा भाव के लिए अहंकार का निषेध आवश्यक है। सेवा का भाव इतना प्रबल हो जाता है कि उसके सामने समाधि, तप और ज्ञान व्यर्थ से लगने लगते हैं। समाधि में मन नहीं लगता, आँखों के सामने भूखे-नंगे बच्चों और कातर दृष्टि वाली माताओं का स्वरूप दिखाई देने लगता है। रैक्व ऋषि दीन-दुखियों की सेवा के लिए गाड़ी खींचकर उन तक छाद्यान्न पहुँचाते हैं और कहते हैं "मां जो दीन-दुखियों की सेवा नहीं कर सकता वह क्या बुद्धि की परीक्षा करेगा।" (पृ. 90) इस उपन्यास में राजा को भी प्रजा के कष्ट दूर करने का उपदेश दिया जाता है—"आपसे यह आशा करते हैं कि प्रजा का कष्ट दूर करने का कुछ उपाय करेंगे। आप समर्थ हैं इन दुखियों का दुख दूर करने का निमित्त बनें।" (पृ. 94) सेवा के लिए सहयोग आवश्यक है। इसी संदर्भ में जबाला से मां ऋताम्बरा कहती हैं "तेरा सहयोग मिलेगा तो दीन-दुखियों के लिए कुछ किया जा सकेगा।" रैक्व भी कुछ करने को व्याकुल हैं..."कुछ तो करना ही पड़ेगा बेटे। लोग जब भूख प्यास से व्याकुल हों तो उनके लिए सोचते रहने का समय तो मिलता नहीं।" (पृ. 97) सेवा को सच्चा आत्म-ज्ञान आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने माना है। "रैक्व गाड़ी पर सात-पात लाद कर गांव के दीन-दुखियों की सेवा करना चाहता



हजारी प्रसाद द्विवेदी

है, कहता है सच्चा आत्म-ज्ञान यही है।"—(पृ. 102) "सच्चा ज्ञान तो वैश्वानर की आराधना है, समस्त विश्व में व्याप्त परम पुरुष की सेवा।"—(पृ. 104) मां ऋताम्बरा ने रैक्व ऋषि को दिन-रात सेवा कार्य में लगा दिया। उसे परम वैश्वानर की सच्ची उपासना बताया। वह दूर-दूर से आए रोगियों की सेवा करते और जो नहीं आ पाता उनके घर जाते और यथासंभव उसकी चिकित्सा करते। शाम को लौटते और कभी-कभी रात गए तक ऋजुका उनकी सहायता करती। औषधि तैयार करके रोगियों की देखभाल का काम करतीं। इस तरह सेवा भाव में वह महान तपस्वी अपना-अपना तप भूलकर पूरी तरह लीन हो गए।

मानवता

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानवतावादी आलोचक भी माने गए हैं और मानवतावाद का संदेश उनके व्यक्तित्व, उनकी कृतियों से निरंतर मिलता रहा है। कहीं-कहीं तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह गांधीवाद से प्रभावित हैं और मानवीयता को बहुत महत्ता देते हैं।—"मैं आवेश में नहीं कह रहा हूँ तात, यह बुद्धि से कह रहा हूँ। आप स्वयं देख आए हैं कि लोग कितने दुखी हैं। फिर मेरा घर/मैं बैठे रहना क्या उचित होगा। मेरा—अंतरतर आज चिल्ला कर कह रहा है कि शरीर, मन, प्राण सभी वैश्वानर

साधन तभी सार्थक होंगे जब इन्हें दुखियों का दुःख दूर करने में लगा दिया जाएगा।" (पृ. 71) "लोक, ताप से तप्त होना सबसे बड़ा तप है, क्योंकि वह अखिल आत्मा पुरुष की परम आराधना है।" (पृ. 74) "अकेले में आत्माराम, प्राणराम होना भी एक प्रकार का स्वार्थ ही है। इन दुखियों के प्रति तेरी दृष्टि गई है तो अंतरतर के देवता की भी दृष्टि जाएगी।" (पृ. 82) मानवता की भावना और मानव की सेवा मानवता की देखभाल करने वाले को देवता से भी ऊंचा बताया गया है। कौन दीन-दुखियों के बारे में सोचता है। जब मानव दुखी हो तो तपस्या करना वैश्वानर भगवान को धोखा देना है।" यहां आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मनुष्य को या मानव को तपस्या से अधिक महत्व दे रहे हैं।

प्रेम

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस उपन्यास में प्रेम का संदेश दिया है, वह प्रेम को मनुष्य के लिए, जीवन के लिए आवश्यक मानते हैं और प्रेम के द्वारा ही सृष्टि का संचालन भी। वह कहते हैं "हां, वत्स मनुष्य उस परम प्रेमी की दस्तकों की निरंतर उपेक्षा किए जा रहा है। वह परम प्रेमी तुम्हारे द्वार पर आकर खटखटा जाता है। एक बार प्रयत्न करो तुम उसे अपने हृदय देश में बात कर बैठा सको, उसका स्वागत कर सको, उसके चरणों में अपने आपको न्यौछावर कर सको।" (पृ. 157) आचार्य जी प्रेम के लिए आत्मदान को आवश्यक मानते हैं और प्रेमी पर स्वयं को न्यौछावर करने की बात करते हैं।—“संसार में जहां कहीं सुन्दरता दिखती है, प्रेम दिखता है, वात्सल्य दिखता है, अनुराग दिखता है, वहीं यह अंगुलि निर्देश भी बरस जाता है, वह उपेक्षणीय नहीं है, निरर्थक भी नहीं है—यह जो सुन्दर वन है, रूप है, आकर्षक वाणी है, अभिव्यक्ति है, वह सब किसी बड़े प्रेम में प्रेमिका का अंगुलि-निर्देश है और उसी रूप में वह सार्थक है, ग्रहणीय है।" (पृ. 159)

आचार्य द्विवेदी संसार संचालन के मोह में भी प्रेम के स्वरूप को देखते हैं और प्रेम के कारण ही सृष्टि का अस्तित्व मानते हैं। प्रेम के उद्वेग को वह सात्विक रूप देते हैं। प्रेम को वह आध्यात्मिकता का उन्नायक मानते हैं और वह प्रेम के उत्पन्न होने पर "यदि तुम्हारे मन में उस तरुणी के प्रति ऐसी भावना हो कि उसके सुख के लिए तुम अपना सर्वस्व न्यौछावर कर सकते हो, अपने प्राण तक दे सकते हो, तो मेरा अनुमान है कि वह तुम्हारी प्रेम भावना है।" (पृ. 184)

प्रेम भावना के लिए आचार्य जी सर्वस्व दान या स्वयं को दलित द्राक्षा की भांति निचोड़ना आवश्यक मानते हैं। द्विवेदी जी आत्म-विश्वास को जीवन के लिए बहुत आवश्यक मानते हैं और वे कहते हैं कि आत्म-विश्वास ही जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। आत्मविश्वास के लिए वह ये मानते हैं "अपने आपको देख लेना ही तो सबसे बड़ी सिद्धि है। आपकी छोटी-मोटी बातें तो अपने आप सिद्ध हो जाती हैं।" (पृ. 180)

आत्मविश्वास के साथ-साथ विश्वास के संबंध में वे कहते हैं "किसी की बात पर तब तक विश्वास नहीं करना जब तक स्वयं उसकी परीक्षा न कर ली जाए। तुम्हारे भीतर जो देवता स्तब्ध

रूप में बैठे हैं उनको पहचानो। तुम्हें स्वयं सोचना, समझना और अनुभव करना चाहिए।" (पृ. 160)

इस उपन्यास में सच्चाई को पाने के लिए ज्ञान को आवश्यक माना गया है। "जिसे ज्ञान नहीं है वह सत्य को पा नहीं सकता और सत्य की अपेक्षा में सब कुछ बना हुआ है। सत्य न हो तो सब बेकार है। सत्य को प्राण से भी बड़ा माना गया है। प्राण भी इसलिए बड़ा है कि वह सत्य है।" (पृ. 154)

परम सत्य के साक्षात्कार के लिए आचार्य जी कहते हैं "जिस वस्तु में मन रमे उसी का ध्यान, धारणा और समाधि उत्तम योग है। उस को पकड़ कर तुम परम सत्य का साक्षात्कार कर सकते हो। परम सत्य—जो तुम स्वयं हो।" (पृ. 181)

"उन्हें आज पहली बार यह सत्य प्रत्यक्ष हुआ कि जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है। उनका चैतन्य प्रसारित हो रहा है।" (पृ. 188) वह सत्य के संबंध में कहते हैं "हर आत्मा का सत्य अपना और निजी होता है, किसी के भी बताए मार्ग पर आंख मूंदकर नहीं चला जा सकता। हर व्यक्ति का अपना सत्य है। उसकी खोज करनी चाहिए। प्रत्येक आत्मा अपने सत्य पर अचल रहकर परात्म पद पा सकती है। (पृ. 175)

प्राण और आत्मा

इस उपन्यास में आत्मा और प्राण का संबंध दार्शनिक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है और वायु के महत्व पर भी बल दिया गया है। रैक्व ऋषि सबसे अधिक महत्व वायु को देते हैं और उसी के द्वारा सृष्टि का संचालन या उसी पर सब कुछ आधारित मानते हैं और आत्मा का संबंध भी उसी से स्थापित करते हैं। मन आत्मा का दैव चक्षु है, दिव्य नेत्र है।"—यह भी आत्मा का साधन है जो मन के द्वारा मनन करता है, वही आत्मा है।" (पृ. 54) "पिण्ड में जो प्राण है, वही ब्रह्माण्ड में वायु है। दोनों वास्तव में एक ही तत्व हैं—पिण्ड में जो आत्मा है, वही ब्रह्माण्ड में ब्रह्म है। सदा विद्यमान, अखण्ड चैतन्य स्वरूप, अनाविल आनंद रूप है, सच्चिदानन्द है। इसीलिए ब्रह्म और आत्मा अभिन्न तत्व हैं।" (पृ. 55)

आत्मा, ब्रह्म और वायु—इनके संबंधों पर इस उपन्यास में निरंतर प्रकाश डाला गया है और बार-बार यह बताने का प्रयास किया गया है कि आत्मा-परमात्मा एक-दूसरे से संबंधित हैं। "सच्चा तत्व जिससे सारा जगत उत्पन्न हुआ है, जिसके बल पर सब कुछ जी रहा है और अंत में सब को जिस में लीन हो जाना है, वह ब्रह्म है, वही शरीर में आत्मा है।" (पृ. 62) इस तत्व को न देखा जा सकता है न पकड़ा जा सकता है, न ये इंद्रियों का विषय है। आत्मवाद के संबंध में वे कहते हैं कि "आत्मवाद वह है जो किसी बात पर अटकता नहीं, निरंतर आगे की ओर बढ़ता जाता है—और भी आगे, तू अपनी मान्यता को वैसा ही मानता है पुत्र? तू प्राण तत्व को कोई स्थिर या अंतिम लक्ष्य मानकर रुक तो नहीं जाता?" (पृ. 154) "जिस ब्रह्माण्ड में वायु कहते हैं और जो पिण्ड में प्राण रूप में विद्यमान है वह वस्तुतः गतिमात्र है। वह चेतना का आधार है या चेतन का एक विशिष्ट गुण है, लेकिन वह स्वयं चैतन्य नहीं है।" (पृ. 155)

भिक्षा

इस उपन्यास में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अनेक स्थलों पर भिक्षुक वृत्ति का विरोध किया है। ऋजुका कहती है—“चलूंगी ब्रह्मचारी तुम आगे-आगे चलो मैं पीछे-पीछे आ जाऊंगी पर मैं किसान की स्त्री हूँ भीख नहीं मांग सकती। कुछ कामकाज करके मजदूरी कर सकती हूँ।” (पृ. 59) यहां कर्म के महत्व को भी दर्शाया गया है। “फिर सारी प्रजा को भिक्षा पर आश्रित भी तो नहीं बनाया जा सकता। उन्हें काम देना होगा, राजा” (पृ. 70) राजा और उसके सहायक भी निरंतर इस बात का ध्यान रखते हैं कि प्रजा में भिक्षा वृत्ति नहीं आनी चाहिए। “परमेश्वर की दया से हमारी प्रजा में अब भी यह सुबुद्धि है कि वह भिक्षा के अन्न पर आस्था नहीं रखती। उसे भिक्षा-जीवी बनने भी नहीं देना चाहिए। कुछ काम कराके ही उन्हें अन्न देना चाहिए।” (पृ. 92) “एक दिन मैंने संकल्प कर लिया कि भिक्षा नहीं मांगूंगा। मैं भूख से कई दिनों तक व्याकुल रहा।” (पृ. 178) इस कथन के माध्यम से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी निश्चित रूप से समाज में फैली हुई भिक्षा वृत्ति का विरोध करते हैं और कर्म के महत्व की स्थापना करते हैं। कर्म को वह तपस्या और सिद्धि प्राप्ति से अधिक महत्व देते हैं।

शिष्टाचार

जीवन में शिष्टाचार बहुत आवश्यक है। शिष्टाचार का उद्देश्य या संदेश हमें उपन्यास में यत्र-तत्र मिल जाता है “हर शिष्ट आचरण का कोई न कोई कारण तो होता ही है। उनका पालन अवश्य करना चाहिए। शिष्टता जीवन के लिए आवश्यक भी है और उपयोगी भी।” इस उपन्यास में मां ऋताम्बरा निरंतर शिष्टाचार की बात करती है और शिष्ट आचरण को विशेष महत्व दिया गया है।

सत्संग

जीवन में कितना ही ज्ञान प्राप्त कर लिया जाए, किन्तु सत्संग जरूरी है, क्योंकि बहुत-सी बातें सत्संग के द्वारा ही जानी जाती हैं। आंख मूंदकर जाप, तप, ध्यान करने से ही सब बातों का पता कहां लग पाता है।

“तूने बहुत तपस्या की है पर तपस्या का एक बहुत आवश्यक अंग है सत्संग उसकी कमी तुम में जान पड़ती है।” (पृ. 51)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सत्संग को तपस्या से अधिक महत्व देते हैं और वर्षों का तपस्वी रैक्व सत्संग के लिए भेज दिया जाता है। “स्वाध्याय और सत्संग प्रथम तप है।” (पृ. 56)

मां जीवन में कितना महत्व रखती है, किन्तु समाज में उसका कितना महत्व है और उसे कितना महत्व दिया जाना चाहिए, यह आचार्य द्विवेदी इस उपन्यास के माध्यम से कहते हैं “आदि मुनि ने कहा है कि आचार्य से सौ गुना गौरव पिता का होता है और पिता से हजार गुना गौरव माता का होता है, पर मुझे अवसर ही कहां मिला कि मैं माता को गौरव दूँ।” (पृ. 46) मां की आज्ञा का पालन करना प्रथम धर्म है इस बात की ओर भी संकेत इस उपन्यास में मिलता है। “तुम्हारी माता जी की जो आज्ञा है उसका पालन करना धर्म है।” (पृ. 159)

नारी का महत्व

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समस्त उपन्यासों में नारी को बड़े महत्व की दृष्टि से देखा है और नारी का मां का रूप उन्हें बहुत अधिक प्रभावित करता है। नारी के मन में भी मां बनने की उत्कट लालसा बनी रहती है। वास्तव में नारी की पूर्णता उसके मां के रूप में ही है। नारी के तेज को भी वह बहुत महत्व देते हैं और कहते हैं कि जब कोई भी नारी किसी पुरुष के निकट अपने सम्पूर्ण प्रेम के साथ आती है तो उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। नारी के महत्व को द्विवेदी जी ने बार-बार अभिव्यक्त किया है। मां का प्यार रैक्व ऋषि को 21 दिन ही मिला, किन्तु वह प्यार उस 21 दिनों के समय में बहुत कुछ सिखा गया और उसे ज्ञान-ध्यान की अनेक विधियां बता गया है।

गुरु

गुरु का महत्व हर समाज में हर समय रहा है और गुरु वह माना गया है जो ज्ञान दे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी इस उपन्यास के माध्यम से कहते हैं—“जो व्यक्तित्व का सर्वोत्तम पक्ष उजागर कर दे और भीतर सोए हुए देवत्व को जगा दे तो वे वास्तव में महान गुरु हैं।” गुरु के संबंध में एक नई स्थापना भी इस उपन्यास के माध्यम से की गई है। गुरु की तलाश अपने भीतर करनी चाहिए—“तेरा देवता तेरे भीतर है। अपने भीतर ही ढूँढ। तेरा गुरु, तेरा देवता, तेरा सब कुछ भीतर है, बाहर भी वही है पर उसे बाहर खोजने में कठिनाई है।”

इस उपन्यास के माध्यम से अनेक सूक्तियों में द्विवेदी जी ने कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को अभिव्यक्त किया है। “आवेश में जो कार्य किया जाता है क्षण स्थाई होता है।” (पृ. 70) “स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ चित्त का निवास होता है।” (पृ. 74) “संस्कृति भी एक बड़ा पोषक है।” (पृ. 81) “अपने को हीन समझना भी दोष है और दूसरे को हीन समझना भी दोष है।” (पृ. 90) “पर दूसरे की चुगली करना कौन-सा विवेक है।” (पृ. 104) “बिना मेहनत किए कोई कला नहीं आती।” (पृ. 107) “सच्चे मित्र से अपने मन की बात कहना कोई अपराध थोड़े ही है।” (पृ. 151) “उद्देश्य नहीं समझोगे तो प्रयत्न बेकार हो जाएगा।” (पृ. 182)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह उपन्यास अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। वह समाधि, ध्यान, ज्ञान सब को महत्व देते हैं लेकिन सबसे अधिक महत्व मानवता और मानवता की सेवा को देते हैं और यह मानते हैं कि वह तपस्या व्यर्थ है जो एकांत में की जाए, जिससे मानवता का कोई उपकार न हो। सबसे बड़ी चीज मानवता की सेवा है। तपस्या यदि कोरी तपस्या ही है और मानव की सेवा से दूर है तो वह मानवता के लिए कोई महत्व नहीं रखती। निरंतर तप करके बड़ी-बड़ी सिद्धियों को प्राप्त कर लेना भी महत्वहीन हो जाता है। यदि मानव और मानवता के कल्याण की बात नहीं सोची जाती। सबसे महत्वपूर्ण मानव और मानवता का कल्याण है। मानव की सेवा और मानव को सबसे अधिक महत्व देना है। मानवता के ऐसे महत्व का निरंतर विवेचन इस उपन्यास में किया गया है। □



कविकथा

: अमर गोस्वामी

भूरेलाल भंवर उच्चकोटि का आशुकवि था। इसी गुण की बदौलत वह विभिन्न नगरों और कस्बों के कुछ बृहत, लघु और लघुतम कवि सम्मेलनों में अपना डंका बजा आया था। मगर सबसे बड़ा करिश्मा तो तब हुआ जब कवि होने की बदौलत उसे एक सरकारी दफ्तर में पी. ए. की नौकरी मिल गई। नगर में जिस छुटभैये ने सुना, उसी ने दांतों तले उंगली दबाई। जिस नौकरी के लिए नगर के पूरे पच्चीस लोग उम्मीदवार थे और अधिकतर की पीठ पर कई बरिष्ठ-कनिष्ठ छुटभैये नेताओं का पंजा था, उन सबको हटाकर किसी आशुकवि का आशुलिपिक हो जाना करिश्मा ही था।

इस करिश्मे के विश्वकर्मा थे सिंचाई विभाग के एक्जीक्यूटिव इंजीनियर उर्फ बड़े साहब। वे गुणग्राहक थे। कवियों की इज्जत करते थे। भूरेलाल भंवर का उन्होंने नाम सुना था। इंटरव्यू में उसके आशुकवित्व की खुद परीक्षा ली थी। भूरेलाल से वे प्रभावित हुए थे और उसका चुनाव कर लिया था। भूरेलाल भंवर नौकरी के लिए लम्बे समय से मारा-मारा फिर रहा था। ऐसे

समय सिंचाई विभाग की यह नौकरी उसे लखटकिया पुरस्कार से कम नहीं लगी थी। वह बड़े साहब के एहसान से झुकी हुई डाल हो गया।

नौकरी के पहले ही हफ्ते बड़े साहब ने उसे शाम की चाय के वक्त अपने बंगले पर बुलाकर इज्जत बखशी थी। सिर्फ इतनी-सी बात से दफ्तर में भूरेलाल स्टार बन गया। बड़े साहब ने उसे जिस दिन बुलाया था, वह उस दिन ठीक वक्त पर बंगले पर हाजिर हुआ। जिस चपरासी से उसने सलाम भिजवाया था, उसने वापस लौटकर भंवर को ड्राइंग रूम में रख दिया और उसे इंतजार का गुलदस्ता थमा दिया। भूरेलाल भंवर ने खाली कमरे में कुर्सी की तरह कुर्सी पर बैठकर कुछ देर तक गहरी-गहरी सांसें लीं। पंखा चलने के बावजूद उसे पसीना आ रहा था। उसने कई बार अपने सस्ते रूमाल से अपने चेहरे का पसीना पोंछा। अकेले कमरे में वह सहमा-सहमा, थोड़ा अकड़कर बैठा हुआ था। हालांकि सहमने का कोई कारण नहीं था फिर भी वह नववधू की तरह सहमा हुआ था। उसे लग रहा था कि बड़े साहब कहीं से छिपकर उसकी हर गतिविधि पर नजर रख रहे हों। सामने दीवाल पर एक उड़ती हुई चिड़िया की पेंटिंग टंगी थी, जिसे देखकर भूरेलाल भंवर के सहमे हुए मन में कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। कुछ देर बाद कनखियों से भंवर ने अपने आसपास चारों तरफ देखा। जो कुछ नजर आया वह इतना भव्य था कि उससे सराहते नहीं बना। उसने सिर्फ एक गहरी सांस ली और क्षण भर को लगा कि उसकी ज्योति मंद पड़ गई है। अचानक उसे बड़े साहब के पैरों की आहट सुनाई पड़ी। वह सतर्क हो गया। जैसे ही बड़े साहब पर्दा हटाकर कमरे में घुसे, भूरेलाल भंवर बंदूक से चली गोली की तरह खड़ा होकर कोर्निश बजाने लगा।

बड़े साहब ने मुस्कराकर कहा, "बैठो भूरेलाल ! नो फार्मैलिटी। काम कैसा लग रहा है?"

भूरेलाल भंवर बोला, "बहुत अच्छा सर! आपने मुझे किसी लायक समझा। सब आपकी मेहरबानी है।"

बड़े साहब ने कहा, "टेक इट इजी! हां भंवर, तुम्हें घर में बुलाने का एक खास मकसद था। आज तुम्हें हम अपने बच्चों से मिलवाना चाहते हैं। तुम्हारे बारे में सुनकर वे तुमसे मिलने के लिए उतावले हैं। वे यह देखना चाहते हैं कि बिना क्षण भर को भी सोचे समझे तुम कैसे फटाफट छंद गढ़कर सुनाते रहते हो।"

बड़े साहब ने जिस सपाट लहजे में 'बिना सोचे-समझे' कहा, उससे भूरेलाल भंवर का आशुकवि आहत हो गया।

भंवर ने पूछा, "क्या बिना सोचे-समझे भी कुछ हो सकता है?"

"तुम्हें देखकर तो यही लगता है," बड़े साहब हंसते हुए बोले, "मगर यह प्रतिभा की बात है और मैं तुम्हारी तारीफ करता हूं।"

"सब आपकी ज़रानवाजी है सर!"

"नहीं तुम सचमुच तारीफ के काबिल हो।"

भूरेलाल भंवर भावुक हो गया। बोला, "अगर आपका साया बना रहे तो जरूर मैं एक दिन कुछ बनकर दिखाऊंगा।"

"मुझे बेहद खुशी होगी। मेरी शुभकामनाएं तुम्हारे साथ हैं।"

भूरेलाल भंवर के मन में समुद्र की लहरें ठाठें मारने लगीं। उसने बड़े उत्साह से कहा, "सर! इजाजत हो तो एक सवैया अर्ज करूं। अभी-अभी दिमाग में आया है।"

बड़े साहब ने सहमति में अपनी गर्दन हिलाई।

भूरेलाल भंवर ने जो सवैया पढ़ा, उसका मतलब था कि जिस प्रकार कवि चंद बरदाय के आश्रयदाता महाराज पृथ्वीराज चौहान थे, कवि बिहारी के आश्रयदाता राजा जयसिंह थे, कवि भूषण के आश्रयदाता महाराज छत्रसाल थे, उसी तरह इस बीसवीं सदी में कवि भूरेलाल भंवर के आश्रयदाता इन तीनों महाराजाओं के सम्मिलित प्रताप वाले सिंचाई विभाग के बड़े साहब हैं। बड़े साहब का पंजा उसकी पीठ पर रहे तो वह कविता के बड़े-बड़े किले फतह कर सकता है।"

बड़े साहब ने खुश होकर अपनी पत्नी और बच्चों को वहां बुला लिया और परिचय की औपचारिकता के बाद बोले, "देखो भंवर ने आते ही कैसी मजेदार बात कही है। बड़े साहब के इशारे पर भंवर ने सकुचाते हुए वही सवैया दुहरा दिया। भंवर की प्रशस्ति से सभी बड़े प्रसन्न हुए। बच्चे ताली बजाने लगे। बड़े साहब की बीवी ने मुस्कराकर कहा "ठीक ही तो कहता है भंवर। मिजाज में तुम भी किसी महाराजा से कम नहीं हो।

साहब ने नाटकीय मुद्रा में कहा, कहां के राजा-महाराजा, हम सिर्फ अपनी बेगम के गुलाम हैं।"

"गुलाम क्यों? बंधुआ मजदूर।" साहब की बेटी इठलाते हुए बोली।

सब हंस पड़े। बड़े साहब ने एक जोरदार ठहाका लगाते हुए कहा, "हमारी बेटी जीनियस है। हमेशा खरी बात कहती है।"

तभी नौकर ने आकर चाय लग जाने की सूचना दी। सभी डाइनिंग रूम में जा पहुंचे। भूरेलाल भंवर ने देखा, डाइनिंग टेबल पर खूबसूरत कप-प्लेट गुलदस्ते की तरह सजे थे। नमकीन और मिठाइयों की खुशबू से भंवर तरोताजा हो गया। उसकी भूख खुल गई। मगर बड़े साहब के बच्चे भूरेलाल भंवर के आशुकवित्व के बारे में ज्यादा उतावले थे। भूरेलाल भंवर बच्चों की तुष्टि के लिए अपनी प्रतिभा की धाक जमाने के लिए उनके दिए गए विषयों पर कविताएं रचकर सुनाता गया। बच्चों ने भंवर से बिस्कुट और समोसों पर भी छंद सुनाने की फर्माइश की। भंवर को एक क्षण के लिए लगा कि बड़े साहब के बच्चे उसका उपहास और दुरुपयोग कर रहे हैं, मगर अपने मन के भावों को जाहिर किए बिना वह अपनी कवित्व कला का प्रदर्शन करता रहा। बड़े साहब के पूरे परिवार का उस दिन भरपूर मनोरंजन हुआ।

बड़े साहब की बीवी बोली, "डियर, मान गए तुम्हारे सेलेक्शन को।" फिर वे भंवर की ओर मुखातिब होकर बोलीं, "भई भंवर, बीच-बीच में आते रहा करो! बच्चों का मन भी बहल जाएगा।"

"आ जाएगा।" बड़े साहब ने सर्वशक्तिमान की तरह कहा, "बच्चे जब कहें, तुम फोन कर देना। मैं भंवर को भेज दूंगा। क्यों भंवर ठीक है न?"

इस अनोखे प्रस्ताव पर भंवर चकित हो गया। उसके मन में

गुस्से की भंवरें पड़ गईं। मगर हड़बड़ी में इतना ही कह पाया, "जी हां, जी हां, क्यों नहीं!"

फरमाइशों की भेड़िया धसान के कारण भंवर के लिए चाय तक पीनी मुश्किल हो गई। बड़े साहब की बीवी के अनोखे प्रस्ताव और साहब की सिरफिरी स्वीकृति के बाद भंवर के लिए चाय जहर बन गई थी। उसने प्याले को दुबारा ओठों से नहीं लगाया।

बड़े साहब की बीवी बोली, "अरे भंवर तुम्हारी चाय ठंडी हो गई। दूसरी ले लो। तुमने तो कुछ लिया भी नहीं। बच्चों, भंवर अंकल को परेशान मत करो।"

मगर भूरेलाल भंवर हाथ जोड़कर उठ खड़ा हुआ। वहां बैठे-बैठे काफी देर हो चुकी थी। बड़े साहब से विदा लेकर वह उस दमघोंटू माहौल से बाहर निकल आया। बंगले से जब वह बाहर निकला तो उसका सर भन्ना रहा था। कुछ दूर चुपचाप पैदल चलने के बाद वह चौराहे के एक सिंधी होटल में जाकर बैठ गया। उसने एक कड़क चाय का आर्डर दिया और आधे घंटे तक चुस्कियां लेता रहा। तब जाकर उसे थोड़ी राहत मिली।

भूरेलाल भंवर लगन का पक्का था। वह नगर के उन कवियों की तरह नहीं था, जो कल्पना में आकाश-पाताल के कुलाबे मिलाते रहते हैं और हरित क्रांति से लेकर खूनी क्रांति तक सम्पन्न कर देते हैं। वह दफ्तर में वक्त पर पहुंचता और लगन से काम करता। शुरू में शार्टहैंड में उसकी स्पीड जरूर कम थी, अक्सर डिक्टेशन लेते वक्त बड़े साहब का कहा बीच-बीच में छूट जाता, मगर धीरे-धीरे उसने गति में आश्चर्यजनक रूप में सुधार कर लिया। उसके काम से बड़े साहब संतुष्ट थे। कभी-कभी जब वे थक जाते तो भंवर से कुछ सुनाने की फरमाइश कर बैठते थे। इसे भी अपनी नौकरी का एक हिस्सा मानकर भंवर मौके के अनुरूप कुछ छंद गढ़कर सुना देता। बड़े साहब की थकान उतर जाती।

नौकरी करते हुए भूरेलाल भंवर को कुछ महीने हो गए थे। वैसे तो सब ठीक चल रहा था, बस भूरेलाल भंवर की पत्नी की तबीयत कई दिनों से गड़बड़ थी। भंवर को लगा कि पत्नी को जल्दी ही किसी अच्छे डाक्टर को दिखलाना चाहिए। उस दिन दफ्तर जाते वक्त वह शाम को पत्नी को तैयार रहने के लिए कह गया। मगर जैसे ही दिनभर का काम निबटाकर भंवर शाम को दफ्तर से निकलने वाला ही था कि बड़े साहब का बुलावा आ गया। उसे देखते ही बड़े साहब ने कहा, "भंवर, तुम्हें बच्चे कई दिनों से याद कर रहे हैं। चलो साथ ही चलते हैं। वहां से तुम घर चले जाना।"

भंवर कुछ सकुचाते हुए बोला, "सर, आज वाइफ को लेकर जरा डाक्टर के पास जाना था।"

"तुम्हें जल्दी ही छोड़ दूंगा। बस बच्चों से जरा मिल लो। उनका दिल बहला दो। फिर चले जाना।"

भूरेलाल भंवर लाचार हो गया। वह बड़े साहब के साथ उनके बंगले पर चला गया। वहां फरमाइश पर छंद सुनाते-सुनाते पूरी शाम बीत गई। कल यह हुआ कि जिस वक्त वह घर पहुंचा तब रात हाजिरी ले रही थी। इंतजार करती हुई भंवर की पत्नी थककर चौके में चली गई थी।

भंवर ने पत्नी को चौके में बुरी तरह खांसते हुए सुना तो उसका मन अपराध बोध से भर गया। भंवर को देखकर उसकी पत्नी बोली, "जब इसी वक्त आना था तो मुझे तंग क्यों किया?"

भूरेलाल भंवर ने दबी जबान से कहा, "क्या बताऊं, दफ्तर से बड़े साहब के साथ उनके बंगले पर जाना पड़ गया।"

"क्यों?"

भंवर ने सकुचाते हुए कहा, "उनके बच्चे छंद सुनने के लिए मचल रहे थे।"

"तुम साहब के बच्चों की आया हो क्या?" भंवर की पत्नी कुढ़ते हुए बोली, "नौकरी दफ्तर में करने जाते हो या उनके बंगले पर?"

भूरेलाल भंवर ने अपनी पत्नी से कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप अपने कमरे में चला आया वह बेहद थक गया था। उसके दोनों बच्चे सो गए थे। उनके सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए वह उनकी बगल में जगह निकालकर लेट गया। लेटे-लेटे वह आज की घटनाओं के बारे में सोचने लगा। क्या वह आज बड़े साहब के साथ जाने से इंकार नहीं कर सकता था? बहुत होता, बड़े साहब नाराज हो जाते। पत्नी को डाक्टर से दिखा तो लाता। मगर बड़े साहब की नाराजगी को झेलना क्या आसान होता? पत्नी को तो तब भी समझाया जा सकता है, मगर बड़े साहब को? जाने वे क्या बिगाड़ बैठें? तो क्या अब भंवर को खुद पर भरोसा नहीं रह गया था?

भरोसा! इस भरोसे वाली बात पर भूरेलाल भंवर की सुई बहुत देर तक अटकी रही। उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि इस शब्द से वह कैसे निबटे? जब भूरेलाल भंवर इस उधेड़बुन में पड़ा हुआ था, उस वक्त उसकी पत्नी कमरे में आई। पति को इस तरह अपने में खोए हुए देखकर उसने उसके माथे पर हाथ रखकर पूछा, "नाराज हो गए क्या? चलो खाना खा लो।"

भूरेलाल भंवर ने अपनी पत्नी का हाथ पकड़कर कहा, "कुछ समझ नहीं पा रहा हूं। जिस कविता के भरोसे ऊपर उठने की कोशिश कर रहा हूं, कहीं वह मुझे नीचे तो नहीं ले जा रही है? क्या सृजन ही मेरे पतन का कारण बनेगा?"

भंवर की पत्नी उसके माथे को हल्के-हल्के दबाते हुए बोली, "तुम नाहक सोच रहे हो। उठो मुंह-हाथ धोकर खाना खा लो।"

भंवर को भूख नहीं थी। मगर पत्नी की नाराजगी के डर से वह उठ गया।

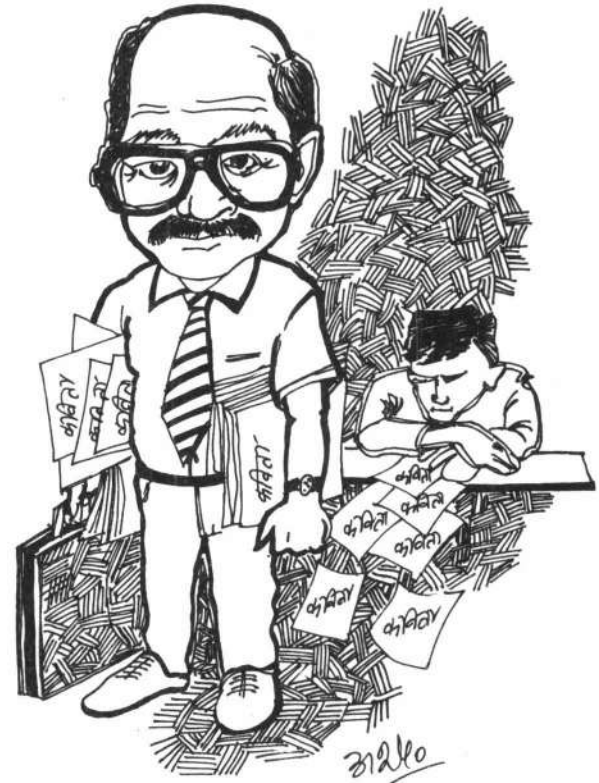
कुछ दिनों के बाद एक अप्रत्याशित संयोग से भूरेलाल भंवर को यह बात मालूम हुई कि बड़े साहब सिर्फ महाराज छत्रसाल की ही योग्यता नहीं रखते वरन कवि भूषण की भी प्रतिभा रखते हैं। किस्सा यह हुआ कि वन्य पशु संरक्षण जानकारी सप्ताह के सिलसिले में रेंजर साहब ने वन मंत्री के साथ डिनर में बड़े साहब को भी आमंत्रित किया था। बड़े साहब ने सोचा क्यों न इस अवसर पर कोई समयानुकूल कविता लिखकर अपने साथी अफसरों की वाहवाही लूट लें। उस दिन उन्होंने अपने कमरे की लाल बत्ती जलाकर एक कविता लिखी—'पशु की पुकार'! कविता पूरी करने

के बाद उन्होंने भूरेलाल भंवर को बुलाया। उसे उन्होंने अपनी कविता सुनाई। कविता घटिया थी। उसे सुनकर भूरेलाल भंवर का मन विरोध में सिंह की तरह दहाड़ने का हुआ, मगर साहस संजो न पाने के कारण वह कुत्ते की दुम बन गया।

अपनी कविता भूरेलाल भंवर को किसी दस्तावेज की तरह सौंपते हुए बड़े साहब बोले, "असं-बाद आज कविता लिखी है। बेहद स्ट्रेन पड़ गया है। तुम इस कविता की पचास प्रतियां साइक्लोस्टाइल करके बंगले पर भिजवा देना। रेस्ट हाउस में डिनर के वक्त इसकी प्रतियां बंटवा दूंगा।" थोड़ा रुककर फिर बोले, "चूँकि बहुत दिनों के बाद कविता लिखी है, शायद कहीं काट-छांट करनी पड़े। ऐसा जहां लगे, बेहिचक कर देना। मुझे बुरा नहीं लगेगा।"

बड़े साहब चले गए।

भूरेलाल भंवर उस बाहियात कविता को अपने सामने रखकर बैठ गया। एक बार तो उसे लगा कि इसे ऐसे ही साइक्लोस्टाइल करके भिजवा दे। फिर उसे लगा कि बड़े साहब के प्रति यह कृतघ्नता होगी। उनकी स्थिति हास्यास्पद होगी तो उसका भी सम्मान नहीं बढ़ेगा। मजबूरन ही सही, मगर मेहनत तो करनी ही पड़ेगी। इसका फल यह हुआ कि संशोधन होते-होते कविता पूरी तरह से बदल गई। बस नहीं बदला तो बड़े साहब का नाम। इसके बाद कविता की साइक्लोस्टाइल प्रतियां निकलवाकर उसने



30/10

चपरासी से बंगले में भिजवा दिया। 'पशु की पुकार' डिनर प्रोग्राम में सुपरहित हुई। खुद वन मंत्री ने बड़े साहब की रचना की तारीफ की। बड़े साहब पर अपनी कविता का नशा छा गया। वे लड़खड़ाते लगे।

उस दिन से भूरेलाल भंवर के सरकारी कामों में एक महत्वपूर्ण काम का इजाफा हो गया। भंवर जैसे गुणग्राहक को पाकर बड़े साहब का विस्मृत कवि अंगड़ाई लेकर जाग उठा। अब आए दिन भंवर को बड़े साहब की कविता सुननी और चुपचाप संशोधन करके बेलबूटे बनाकर टाइप करनी पड़ती थी, जिसे बड़े साहब जिले के वरिष्ठ-कनिष्ठ साहबों को विभिन्न मौकों पर सुनाते रहते। बदले में उन्हें तारीफ के जो शब्द मिलते, उससे वे दिन-ब-दिन पुष्ट होने लगे।

बड़े साहब का जब कवि जागा तो उनका प्रकृति प्रेम भी जाग उठा। प्रकृति कवियों के लिए प्रोटीन होती है। उसके सान्निध्य से कवि की दिमागी ताकत में इजाफा होता है। इसलिए अब बड़े साहब का मन हेड आफिस में कम लगता, साइट पर ज्यादा। वे दौरे पर ज्यादा रहने लगे थे। काव्य-सृजन का सुख तो था ही, दौरे के व्यावहारिक लाभ भी थे। पी. ए. होने के कारण भूरेलाल भंवर की पत्नी को इससे तकलीफ होने लगी। बड़े साहब को वह अपनी सौत समझने लगी। भूरेलाल भंवर के लिए यह बड़े संकट की बात थी। वह न बीवी को नाराज करना चाहता था न बाँस को। बीवी और बाँस के बीच वह धिक्कार बनकर रह गया था। हर बार दौरे पर रवाना होने से पहले पत्नी को नए सिरे से समझाना पड़ता था। इसके बाद भारी मन से साहब के साथ नत्थी होकर वह दौरे पर चला जाता। बार-बार इस तरह से अपने को बड़े साहब के साथ सांटना भंवर के लिए भी तकलीफदेह हो गया था।

भूरेलाल भंवर को इस बात का भी एहसास होता था कि बड़े साहब के लिए अब वह सिर्फ वस्तु होकर रह गया था। उसके कवि व्यक्तित्व में बड़े साहब की कोई रुचि नहीं थी। भूरेलाल भंवर उनके लिए महज एक पी. ए. था, जिसका काम सिर्फ दफ्तर में ही नहीं बल्कि बड़े साहब के घर में भी ड्यूटी बजाना था। अफसर और मातहत के बीच की दूरी अब साफ और गहरे रंगों वाली हो चुकी थी। अब कवि भूरेलाल भंवर की बड़ी जिम्मेदारी बड़े साहब के विता कानन की हरीतिमा को बनाए रखने की थी। वह पानी भरा हजारा बन गया था।

साइट पर जाते ही बड़े साहब के काव्य का ग्राफ तेजी से ऊपर चढ़ने लगता। भूरेलाल भंवर को सावधान रहना पड़ता कि बड़े साहब की कोई भावकनी खो न जाए। इसके लिए उसे हरदम डिक्टेशन बुक लेकर तैयार रहना पड़ता था। अब बड़े साहब के मुख से समय-असमय भावोद्गार फूटते रहते थे। भूरेलाल भंवर को महसूस होता जैसे ज्वालामुखी से लावा फूट रहा हो। कभी निर्माणाधीन बांध पर अपने मातहतों को निर्देश देते हुए उनका भावबांध फूट पड़ता, जिसे सुनकर पी. ए. भूरेलाल भंवर की कलम गतिशील हो जाती। कभी जीप चलाते-चलाते बड़े साहब किसी प्राकृतिक या मानवीय सौंदर्य को देखकर तरंगित हो उठते और गाड़ी रोककर अपने भावजगत की जीप स्टार्ट कर देते। भूरेलाल भंवर को फटाफट डिक्टेशन बुक खोलकर अपने साहब

की गति के साथ जुगलबंदी करनी पड़ती। रात को रेस्ट हाउस में आरामकुर्सी पर बैठे-बैठे इत्मीनान से विहस्की पीते और काजू भकोसते हुए बड़े साहब की काव्य-पंखुरियां खुल जातीं और वे भंवर को बुला बैठते। उन पंखुरियों की तारीफ करना तो भंवर का ही काम था। वह अपनी नौकरी बजाता। लेकिन सहने की भी हद होती है। ऊपर से गुनगुनाना और भीतर-भीतर भुनभुनाना भूरेलाल भंवर का स्थायी भाव हो गया। कभी उसका मन विद्रोह करने के लिए छटपटा उठता। लगता नौकरी को लात मार कर खुली हवा में आ जाए। मगर जब उसे अपनी बीमार पत्नी और बच्चों का ख्याल आता तो वह मन मसोसकर रह जाता। रात को बड़े साहब के सोने पर जब वह खुद कविता लिखने की कोशिश करता तो नींद उसे इस बुरी तरह चांप लेती कि वह कलम पकड़े-पकड़े ही सो जाता।

बेचारा भंवर बड़े साहब के काव्य-सृजन से इतना आर्तकित हो गया था कि उसे सपने में भी लगता रहता कि वह बड़े साहब से कविता का डिक्टेशन ले रहा है। उसकी नींद खुल जाती। चोर निगाहों से वह डिक्टेशन बुक की ओर देखता, फिर अपने हाथों की ओर। फिर अपना पसीना पोंछकर वह सोने की कोशिश करता। लेते-लेते वह अपने आशुकवित्व की परीक्षा करता। दो-तीन पंक्तियों के बाद किसी घुसपैठी की तरह उसकी कविता में बड़े साहब की कोई कविता पंक्ति जबरन घुस जाती। ऐसे वक्त भूरेलाल भंवर को लगता कि उसे हत्यारे की गोली लग गई हो और वह हे राम! हे राम! करते हुए छटपटाने लगता।

कवि के रूप में धीरे-धीरे जिले में बड़े साहब की धाक जम जाने के कारण जिले में होने वाले सभी कवि सम्मेलनों के निमंत्रण बड़े साहब को मिलने लगे। इन सम्मेलनों में उन्हें कभी मुख्य अतिथि या कभी अध्यक्ष की हैसियत से बुलाया जाता। बड़े साहब का ओहदा कवि सम्मेलन के महत्व को बढ़ा देता। जो लोकप्रियता कभी भंवर को अपने सफल आशुकवित्व की बदौलत मिली थी, बड़े साहब ने उसे अपने पद से हथिया लिया था। जब साहब मंच पर होते तो बेचारे आशुकवि को अपना आशुलिपिक होना ही याद रहता था।

बड़े साहब पर कवि सम्मेलनों का नशा इतना ज्यादा चढ़ा कि वे अक्सर खुद ही कवि सम्मेलन आयोजित करवाने लगे। इनमें पैसा गर्जमंद ठेकेदारों का लगता था। साहब को खुश करने के लिए उन्हें भी अच्छा जरिया मिल गया था। कभी स्वाधीनता दिवस, कभी गणतंत्र दिवस, कभी राष्ट्रीय एकता, कभी शिलान्यास, कभी नव निर्माण, कभी पूर्ण निर्माण तो कभी जन्मदिन के बहाने आए दिन कवि सम्मेलन आयोजित होते रहते। इन कवि सम्मेलनों में व्यवस्था के सिलसिले में भंवर को इतना व्यस्त रहना पड़ता था कि उसके मंच पर बैठने की नौबत ही नहीं आती थी। कभी परिचित कवियों के इसरार पर या जनता की मांग पर ऐसी स्थिति आ भी जाती तो बड़े साहब इतनी सहजता से उसे कुछ ऐसा काम सौंप देते, जिससे वह नेपथ्य में चला जाता। हालांकि प्रकट में बड़े साहब उसकी पीठ ठोकते रहते मगर इस पीठ ठोकने का असली मतलब वह समझ गया था। यह वह भलीभाँति जान गया था कि बड़े साहब नहीं चाहते थे कि उनकी उपस्थिति में वह बाहवाही लूटे। उसे अच्छी तरह याद है

कि शुरू-शुरू में जब श्रोताओं ने भंवर की वाहवाई की थी और बड़े साहब को हूट किया था तो साहब का मूड कई दिनों तक उखड़ा रहा था। दफ्तर में भंवर को बेबात की डांट पड़ती रहती। उन दिनों भंवर को अपने बेरोजगार होने का खतरा नजर आने लगा था। तभी उसने समझ लिया था कि चमत्कारिक आशुकवि और बेहतर आशुलिपिक होने के बीच उसे एक का चुनाव करना ही होगा। एक बार खीझ और ग्लानि से भरकर वह अपना इस्तीफा भी टाइप करने लगा था, मगर बाद में उसने पाया कि उस पर तो बड़े साहब की कविता 'पशु की पुकार' टाइप हो गई थी। अपनी कविता से ज्यादा उसे अब नौकरी की जरूरत थी।

भूरेलाल भंवर यह समझ नहीं पा रहा था कि जो कुछ हो रहा है, वह सही है या गलत। वह इसी अंतर्द्वन्द्व में खोया रहता। एक दिन वह टाइप मशीन के सामने बैठकर बेख्याली में की-बोर्ड पर उंगलियां चला रहा था। अचानक किसी काम से बड़े साहब उधर से गुजरे। भूरेलाल भंवर को पेपरवेट की तरह देखकर उन्हें कुछ संदेह हुआ। वे रुक गए। उन्होंने झांककर उस टाइप शीट को देखा। भंवर ने पूरी शीट पर लगातार एक ही वाक्य टाइप कर रखा था। वह वाक्य था—'कवि की मौत।'

पर्सनल फाइल में लाल रिमार्क की तरह बड़े साहब को अपने सामने पाकर भूरेलाल भंवर चौंककर खड़ा हो गया। बोला, "सर आप?"

बड़े साहब हंसते हुए बोले, "कवि की मौत देख रहा था।"

भंवर पर घड़ों पानी पड़ गया। वह अपराधी की तरह सिर झुकाए खड़ा रहा।

बड़े साहब ने उसी तरह हंसते हुए कहा, "अगर लिखना ही है तो लिखो—'कवि का सृजन!'"

"यस सर! यस सर! कहते हुए भूरेलाल भंवर ने अपना सिर हिलाया।

अचानक बड़े साहब को कोई बात याद आ गई। वे बोले, "भंवर मेरे कमरे में आओ।"

भंवर के कमरे में जाने पर बड़े साहब ने मेज की दराज से बड़ी चतुराई से एक कागज निकालकर भंवर को देते हुए कहा, "मैं तुम्हारी राय जानना चाहता हूं।"

भंवर ने देखा, उस कागज पर एक कविता लिखी हुई थी।

बड़े साहब ने फिर कहा, "पढ़कर बताओ कैसी है?"

भंवर ने बिना पढ़े ही उद्भांत की तरह कहा, "अच्छी है। बहुत अच्छी है। वेरी नाइस सर!"

"खाक अच्छी है। यह तो कालेज डेज में लिखी मेरे एक दोस्त की कविता है। रबिशा! कल पुराने कागजों की सफाई में मिली थी।"

फिर उन्होंने एक और कविता भंवर को थमाते हुए कहा, "उन्हीं दिनों की लिखी मेरी भी एक कविता है। जरा इसे देखो।"

भंवर ने इसे भी बिना पढ़े ही कहा, "वेरी गुड सर।"

भंवर के लहजे से बड़े साहब समझ गए कि यह सिर्फ मुंहदेखी थी।"

बड़े साहब बोले, "तुम्हारी चोरी पकड़ी गई भंवर! तुमने कविता बिना पढ़े ही अपनी राय दी है। ठीक है न?"

भंवर ने कुछ नहीं कहा। वह किसी खंडहर की तरह खड़ा रहा।

"चुप क्यों हो? कुछ कहो भी। अपनी राय दो। संकोच की कोई बात नहीं है।"

भूरेलाल भंवर ने कहा, "सर, भला एक मातहत की क्या राय होती है?"

"मगर मैंने तुम्हें मातहत से ज्यादा समझा है।"

"सर, मातहत, मातहत ही होता है। न कम न ज्यादा। भला लोहे के बुरादों से चुम्बक के बारे में क्या पूछना।"

साहब ने गौर से भंवर की ओर देखा। बोले, "तुम्हारी तबीयत ठीक है न भूरेलाल भंवर।"

"सब आपकी कृपा है, सर!"

बड़े साहब को लगा, इस बात का मतलब इतना सीधा नहीं है। आज भंवर कुछ ऊंची ही सैर कर रहा है। क्यों न हो, आखिर एक कवि है न! वे हंसने लगे। बोले, "कवि कथन!"

भूरेलाल भंवर ने साहब की आंखों में आंखें डालकर फिर आंख चुराते हुए कहा, "कवि कथन नहीं, कवि कथा!" □

हिन्दी संडे ऑब्जर्वर
विजया बिल्डिंग, 17 बाराखंबा रोड
नई दिल्ली-110 001

आजकल का चंदा

एक प्रति 3 रुपए; वार्षिक 30 रुपए; द्विवार्षिक 54 रुपए तथा त्रिवार्षिक 72 रुपए मात्र।

छत्रों, अध्यापकों और पुस्तकालयों के लिए चन्दे में 10 प्रतिशत की छूट। इसके लिए प्रमाण-पत्र भेजना आवश्यक है।

आजकल के नियमित ग्राहकों को प्रकाशन विभाग की 5 रुपए या अधिक मूल्य की पुस्तकें खरीदने पर 10 प्रतिशत छूट दी जाती है।

चन्दे एवं विज्ञापन तथा पत्रिका न मिलने की शिकायत भेजने का पता — व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली। ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक 'आजकल' (हिन्दी), पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001, दूरभाष : 387069

कुंआं झलाई वाले

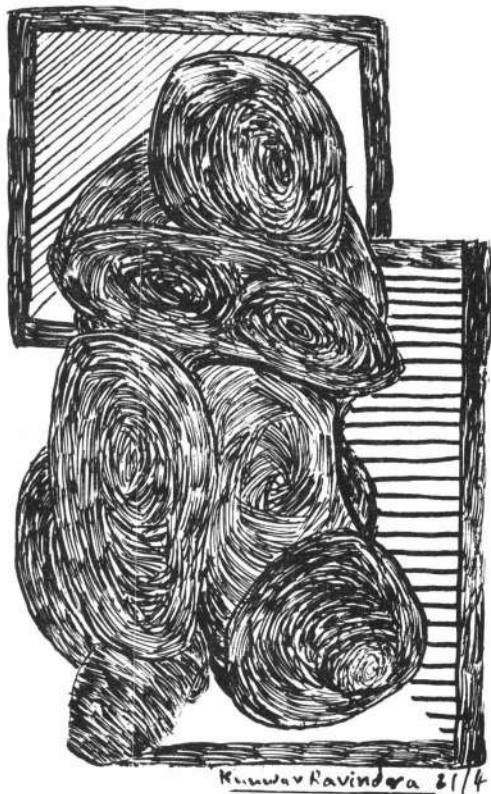
श्याम अविनाश

वै शाख या जेठ के दिन
जब कुंएं का पानी बहुत नीचे चला जाता
रस्सी में लग जाती कई गिठाने
झांकने पर दिखता एक खौफ हममें झांकता
उन्हीं दिनों आते कुंआं झलाई वाले
पसीने से चमकती सांवली सूखी
अधभूखी देह लिए
वे चार जने होते, पूछते
कुंआं झलवाना है क्या
घर के पिछवाड़े जा देख आते कुंआं
बुदबुदाते बहुत पानी है
फिर दर दस्तूरी होती
वे पट जाते चालीस रुपये में
लाई जाती तीस-चालीस हाथ लम्बी, मोटी रस्सी
बांधे जाते उसमें दो बड़े कनस्तर
हम उत्तेजित से झांकते कुंएं में
चाची चिल्लाती—अरे मरजानों आज
दो एक गिर कर मरोगे कुंएं में
हम दो कदम पीछे हट जाते
बहन मेरे कान में फुसफुसाती
कांसे की कटोरी जो मिली नहीं थी
मुझसे ही गिर गई थी कुंएं में
देखना अब निकलेगी
हम याद करते हमने क्या-क्या
गिराया था कुंएं में
दुःख होता हमने कितना कम गिराया था कुंएं में
कुंआं झलाई वाले पानी निकाल-निकाल
बहाते रहते, बहती रहती उनके बदन पर
पसीने की धार, होंकने लगते वे
कुंआं खाली हो जाता
बाहर निकल आता हमारा बचपन
झर्-झर् साफ पानी वापस आने लगता कुंएं में
झलाई वाले सामान समेट रख देते
चालीस रुपये लेते एक दूसरे का मुंह देखते
चुपचाप चले जाते
साफ पानी से दूसरे दिन भर जाता कुंआं। □

मोहन डेयरी फार्म, पी. एन. घोष स्ट्रीट
पुरुलिया, (पश्चिम बंगाल)

हर रात
ये हादसा हो जाता है
कि कलकत्ते के फुटपाथों पर
बेखबर सोए लोगों में से/कुछ का सर
बेरहमी से कुचला जाता है
और पास पड़ा होता है
लहू-रंगा, बड़ा बड़ा सा बेजान पत्थर
जो किसी जानदार हाथों में आकर
कितनों को बेजान कर चुका होता है
अखबारों में खबरें छपती हैं
प्रशासन सतर्क हो जाता है
और लोगों को सतर्क किया जाता है
कि शहर में आ गया है—पत्थरमार!
गश्त तेज कर दी जाती है
रात को फुटपाथ के करीब
हाथ में बड़ा सा पत्थर लिए
वो पकड़ा ही जाता है—आखिरकार
और बांध कर लाया जाता है लाल बाजार
सब चैन की सांस लेते हैं
और फिर उस रात बेखबर सोते हैं
सुबह अखबार में उसकी फोटू छपी थी
चाय सचमुच मीठी लग रही थी
बाजारों में कितनी चहल-पहल थी
अचानक रात को फिर कूदने लगती हैं
टेलीप्रिंटर पर/पत्थरमार की शिकार खबरें
पर पत्थरमार तो लौकअप में बंद हैं
फिर भी गिनती बेहिसाब बढ़ती जाती है
चाय कड़वी हो चली है
बाजारों को सांप सूंध गया है
अखबार के अक्षर धुंधलाने लगते हैं
और मेरी आंखों के सामने
एक-एक कर सारे शहर/फिर पूरा देश
फुटपाथ में तब्दील होने लगता है
और मैं ध्यान से उस फोटू को देखता हूं
तो उसमें हम सब का चेहरा भी
एक-एक कर साफ नजर आने लगता है
और हर हाथ में पत्थर होता है
तो क्या हमीं हैं वो पत्थरमार
जो दूसरों की खबरें बनाते हैं
और एक दिन खुद भी खबर हो जाते हैं
आओ हम सब एक साथ चलें
और हाथों में उठाया हुआ पत्थर
किसी महासागर में फेंक आएंगे
फिर दोनों हाथों से/खुले आकाश में
ढेर-से कबूतर उड़ाएं....। □

पी. एन. मालिया रोड, रानीगंज-613347



जीवन सिकुड़ता जा रहा है

चम्पा वैद

जीवन सिकुड़ता जा रहा है
अखरोट सा

संशय और अविश्वास के
मसूड़ों सा
जहाँ अब दिखने लगे हैं सूराख
सूराखों से ओठों के अन्दर वाले भाग पर
बन रहे हैं घाव जो
बढ़ रहे हैं
सूराखों के साथ-साथ
हवा इन घावों को चाटती ले जाती है
वह गूँज जो
गूँज रही होती है बिना शोर। □

अपने ही फूलों में

खो बैठी हूँ यौवन
जो नाचा करता था आस-पास
जिसमें बौराई रहती थी मैं
अपने ही फूलों में। □

1652, सैक्टर-बी, पॉकेट-1,
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110030

गीत

भारतेन्दु मिश्र

नो न तेल लकड़ी के
हैं कई सवाल

जिन्हें

करना है हल

उम्र की लगाम रही

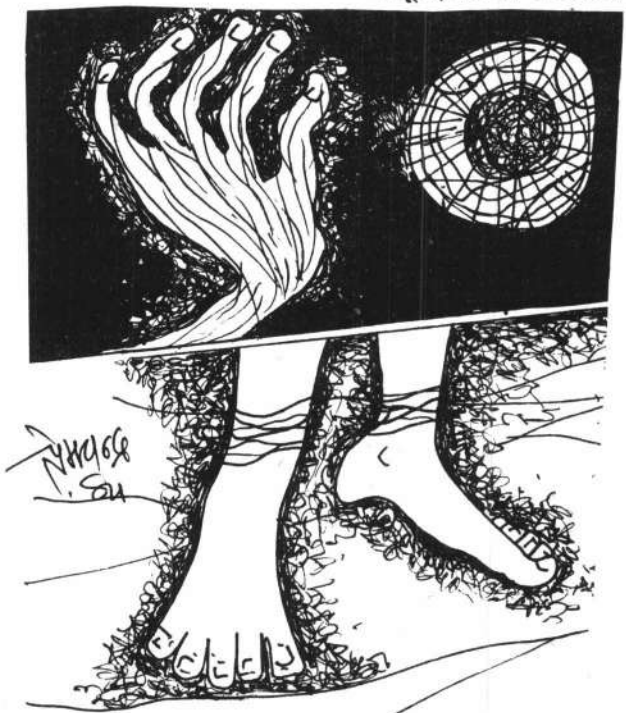
हाथ से फिसल।

नदी के किनारे पर मैं खड़ा
बहती धाराओं को घूरता रहा
संग-संग चलने के न्योते थे
पत्रों को और मैं बिसूरता रहा
चुभ-चुभ कर
काटता रहा मुझको छल।

भीषण सैलाबों को झेल
मैं तिनका तिनका होकर बहा
सूखने लगा अब तो खून
देह यष्टि ने रुको-रुको कहा
सूख गया कंठ
नहीं आंखों में जल।

आफिस के चमचों के आगे
पाई है थोक भाव डांट
झूठ की वकालत ने सच के
दो इन्क्रीमेंट लिए चाट
घड़ी ज़रा देख
और काम पर निकल। □

6, प्रथम तल, चेयरमेन मार्केट
खजूरी, दिल्ली-110094



औरत

औरत सम्बंधों दर सम्बंधों
के भार में दबकर
विभिन्न कोष्ठकों में जीती हुई
एक दूसरे में संक्रमण करती हुई
पीठ पर लादे हुए
अपने कद से बड़ी
कर्तव्यों की गठरी
स्वयं एक गठरी में तब्दील हो जाती है
जिसे बांधकर जब जी चाहे
खूटी पर लटका दिया जाता है
और जरूरत पड़ने पर
हर सदस्य खोलकर बीन लेता है

अपनी-अपनी सुविधा
अंदर से चिंदी-चिंदी होकर भी
औरत ठांपती है
तुम्हारी आकांक्षाओं का तन
और तुम उसे
अपने लापरवाह कदमों से
कुचलते हुए
हाथ में लिए
अपने अहम् का झण्डा
फहराते रहते हो। □

के. 7/21, लाला सूर की गली
वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)



गायत्री माहेश्वरी

कोई इतिहास नहीं

जगदीश श्रीवास्तव

धूप तपी चट्टानों पर हम
नंगे पांव चले।

बंजारा आवारा बादल
का विश्वास नहीं
रहे पीठ पर घर लादे
कोई इतिहास नहीं
मंजिल से पहले मंजिल के
सपने गए छले।

मन की टूटी दीवारों पर
इश्तहार टांगे
कर्ज ब्याज में जीवन गिरवी
कोई क्या मांगे
मेहनत का सूरज आंखों में
हर दिन शाम ढले।

दिन बीता हर शाम उदासी
रात अलावों पर
मौसम नमक छिड़क जाता है
मन के घावों पर
थका मुसाफिर घर को लौटे
जैसे शाम ढले। □

गुप्तेश्वर मंदिर, अन्दर किला
बिदिशा, (मध्य प्रदेश)

चिड़िया

दीनेन्दु भारती

अस्तित्व रक्षा से
धाक जमाने तक की लड़ाई

यदा-कदा
चिड़ियों में भी
हो जाया करती है
अपनत्व और ममत्व की भावना
उसके संस्कार में भी
कम नहीं है
राग-विराग की पिपही बजाना
पता नहीं
उसने किस गुरु से
सीखा है
पर वह
जिस पेड़ पर
घर बनाकर रहती है
अपने बच्चों को
पोसती है
उस पेड़ को
कभी नहीं
काटकर
जलाती है। □

भारती निलय पड़ाव पोखर पथ-2
आमगोला, डा. रमना
मुजफ्फरपुर (बिहार)

वै लीग

अमरेन्द्र मिश्र

ना वालिग प्रसाद का मकान उस गली के सबसे आखिर में पड़ता है। कहना चाहिए कि उसका मकान इसी गली का सबसे आखिरी मकान है। उसके मकान से सटा शिवालिग प्रसाद का घर है। दोनों पड़ोसी हैं। पर आज तक दोनों को आपस में किसी ने बातचीत करते नहीं देखा है। सिर्फ मकान पास होने की वजह से ही दोनों पड़ोसी हैं पर एक पड़ोसी का दूसरे पड़ोसी के साथ जो सुख-दुख में सहभोक्ता होने का प्रमाण होता है या होना चाहिए वैसा दोनों के बीच तालमेल नहीं था। उसका सबसे बड़ा कारण यह था कि शिवालिग प्रसाद और नावालिग प्रसाद की जीवन शैली एक-दूसरे से भिन्न-भिन्न थी। मगर नावालिग सुबह-सुबह नहा-धोकर पूजा-पाठ करते थे तो शिवालिग आठ बजे सोकर उठते थे। नावालिग प्रसाद के घर से धूप बत्ती की सुर्गंधित खुशबू महमहाती थी तो शिवालिग के घर से मीठ या मछली के बनने की गंध उनके आंगन में तैर जाती थी। नावालिग पूजा करने बैठते तो शिवालिग आधुनिक फैशन का कोई चालू गीत टेप रिकार्डर पर चला देते थे। ऐसे मौके पर नावालिग परेशान होते और गुस्सा करते। मन ही मन बुदबुदाते—“क्या फटीचर आदमी है। जरा-सा शाउर नहीं है। पता नहीं किस स्कूल में पढ़ा है कि पूजा-पाठ का इसे संस्कार प्राप्त नहीं है। दिन भर दुकान में बैठा ग्राहकों को ठगता रहता है। गई रात घर पहुंचता है। शराब पीकर बीबी बच्चे की वह ऐसी पिटाई करता है कि देखा नहीं जाता। इस नालायक को कौन समझाए भला? और उस उम्र में किसी को समझाया जाता है क्या?” शिवालिग भी मन ही मन कहते—“इस नावालिग ने तो जीना हराम कर रखा है। सुबह हुई नहीं कि बस शुरू हो गया। हनुमान जी की स्तुति इतने जोर-जोर से चिल्ला कर करता है कि नींद टूट जाती है।

शिवालिग और नावालिग की पत्नियां भी ठीक अलग-अलग सीमाओं पर खड़ी थीं। अगर शिवालिग की पत्नी अपने घर का कूड़ा कूड़ेदान में डालती थी और जमादार के आने पर कूड़ा उसे दे देती थी तो नावालिग की पत्नी घर का सारा कूड़ा घर के आगे की नाली में ही डाल देती थी। जब जमादार आता और कहता कि नालियों में कूड़ा कौन डाल जाता है तब नावालिग की पत्नी तपाक से जवाब देती कि ऐसा वह नहीं करती बल्कि शिवालिग की पत्नी ऐसा करती है।

कहने का अर्थ यह कि कमियां दोनों में थीं किंतु उनमें से कोई भी उसे अपने ऊपर लेने को तैयार नहीं था। न सिर्फ नावालिग या शिवालिग वरन् पूरा मुहल्ला ही चौपट था। चिंता की बात तो यह थी कि दुनिया भर की दुश्चिंताएं, समस्याएं और अभाव का साम्राज्य सर्वाधिक इसी मुहल्ले में था। पढ़े-लिखे आदमी के नाम

पर एकमात्र नाम मोहन का था जिसके विषय में विशेष ख्याति फैल चुकी थी कि वह बी. ए. पास है लेकिन किसी का डाकघर से टेलीग्राम आ जाता तो मोहन उसका अर्थ जानने के लिए पूरी डिव्शनरी पलट देता। मोहन के साथ दुर्भाग्य की बात यह थी कि वह बेरोजगार था और बजाए इसके कि कहीं किसी काम-धंधे की सोचता, दिन भर दिलबहादुर की पान की दुकान पर बैठा-बैठा गप्पें मारता रहता और दोपहर बाद अपने स्कूल से वापस लौट रही लड़कियों पर फब्तियां कसता। लेकिन यह सब बातें उसकी उम्र में शामिल थीं और अच्छी बात तो यह थी कि मोहन कभी अपनी सीमा का अतिक्रमण नहीं करता था। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता कि अगर मोहन को समय रहते ठीक दिशा में आगे बढ़ने को प्रेरित किया जाए तो संभवतः वह ठीक हो सकता है। मैं सोचता रहता कि क्या पता दिलबहादुर ही उसे गलत काम की प्रेरणा देता हो और उससे प्रेरित होकर वह वैसा करता हो। मैं सोचता रहता, कभी उसे समझा दिया जाएगा।

एक रोज मैं जब दफ्तर से वापस लौट रहा था तब मैंने मोहन को उसी पान वाले की दुकान पर देखा। दिलबहादुर दूसरे लोगों को पान-सिगरेट दे रहा था। मोहन उसकी दुकान के बाहर पड़ी बेंच पर बैठा कोई पत्रिका पढ़ रहा था। वह इतना अधिक तन्मय और एकाग्रचित्त था कि मेरे आने, दुकान पर खड़ा होने और दिलबहादुर से पान बांधने के लिए कहने का आभास तक उसे नहीं हुआ। मैंने पान लिया, बैग में रखा और मोहन से पूछा—“कौन-सी पत्रिका है बेटे?” उसने झट से उधर से अपना ध्यान हटा लिया तो दिलबहादुर आश्चर्य-सा मेरी ओर मुखातिब हुआ। मोहन ने कहा—“खुद ही देख लो तुम।” यह कह कर मोहन सड़क के किनारे-किनारे जा रही उस लड़की को देखने लगा जिसका नाम निशा वर्मा था और जो ठीक मेरे पड़ोस में रहती थी। मैंने पत्रिका मोहन को दे दी फिर पूछा—“अच्छी पत्रिकाएं क्यों नहीं पढ़ते, क्या उनका अकाल है? फिर आजकल तो कितनी ही अच्छी-अच्छी पत्रिकाएं मार्केट में कम मूल्य में भी मिलती हैं।”

दिलबहादुर ने मोहन को उकसाया—“अबे तू रह गया बेवकूफ। वह चली गई और तू बुत बना देखता रहा...”

मोहन कुछ नहीं बोला बल्कि उल्टा वह खामोश बना सकते में आ गया। उसने वह पत्रिका उस पान वाले को दे दी और उस सड़क की तरफ चल पड़ा जो सिनेमा हाल की तरफ जाती थी...।

दूसरे रोज शाम के ठीक छह बजे मैं दिलबहादुर की दुकान पर आया तो वहां मोहन नहीं था। मैंने उससे पूछा तो उसने कुछ नहीं

बताया, सिर्फ इतना ही कहा—“जाओ, जाओ बाबूजी आप आते रहे तो हमारी दुकानदारी खराब हो जाएगी।”

“कैसे भाई? कैसे हो जाएगी तुम्हारी दुकानदारी खराब हमारे आने से? जरा बताओ तो सही?”

“जानना चाहते हो?” उसकी आंखें ज्यादा फैल गईं।

“क्यों मुंह लगाते हो बेमतलब इससे।” पास खड़े एक नवयुवक ने बताया। मुझे लगा, यह दिलबहादुर की साजिश है। उसके कुछ आदमी हैं, वे उसकी दुकान के इर्द-गिर्द ही खड़े रहते हैं और मतलब-बेमतलब किसी भी प्रकार की स्थिति हो, पीट पिटाई पर उतारू हो जाते हैं। मैंने नावालिग प्रसाद से कई बार सुना था कि यह दिलबहादुर शांतिर बदमाश है। मैट्रिक पास है। दस वर्ष पूर्व यहां आया था...कहीं बिहार के किसी छातापुर इलाके का है। पहले पहले यहीं के सिनेमा चौक पर ‘पारिजात होटल’ में कैशियर के काम पर लगा। होटल के मालिक का इस दिलबहादुर पर बड़ा विश्वास था। एक रोज मालिक सब कुछ दिलबहादुर पर सौंप कर आराम करने अपने आवास पर चला गया।

की गिरफ्त में था। वह भौंचक था। यह क्या, यहां एक लड़की की लाश? यह कौन हो सकता है?”

“तो तुम भागने की कोशिश कर रहे थे?”

“साहब इसने पारिजात होटल में खून कर दिया है”—एक पुलिस का नौजवान इंस्पेक्टर को बता रहा था।

“साहब भाग नहीं रहा था। मैं अपने मालिक को बताने जा रहा था साहब....कि वे लोग होटल लूटने आए थे।....वे लोग मुझे भी मार देते साहब....।”

भीड़ अब छूटने लगी थी। सिनेमा रोड को पुलिस ने घेर रखा था। गाड़ी, टैपो, स्कूटर, कार सब दूसरी ओर मोड़ दिए जाते थे। “ऐ! ऐ! उधर से जाओ। चलो-चलो। साला बात नहीं मानता है...।” एक पुलिसवाले ने एक आते हुए रिक्शावाले को सर पर ढक से लाठी का प्रहार किया। उसका सर चकरा गया। पैर से पैडल छूट गया और हाथ से रिक्शे का हैंडल। वह लुढ़क गया। उस पुलिसिए ने दूसरे रिक्शावाले को कहा, “उसे अस्पताल ले जा जल्दी। खड़ा-खड़ा मुंह क्या देख रहा है?”



रात के बारह बजे थे। नेशनल सिनेमा हाल जो ‘पारिजात होटल’ के ठीक बगल में ही स्थित था, का आखिरी शो छूटा ही था कि सड़क पर भागम-भाग मच गई। शो छूटने पर भीड़ का होना तो रोज की रूटीन का ही एक अंग है पर उस रोज पता नहीं क्यों एक बदहवास भीड़ जमा थी...लोग भागना चाह रहे थे किन्तु कहीं रास्ता नहीं सूझ रहा था। इसी बीच अचानक भीड़ के एक काफिले ने ‘पारिजात होटल’ को घेरने और लूटने की कोशिश की तो दिलबहादुर ने सजग होकर फटकारा—“खबरदार, इधर नहीं...कोई इधर नहीं आएगा। अगर कोई इधर आया तो जान की खैर नहीं। किन्तु एक नौजवान आगे बढ़ ही आया और उसने सीधा कैश काउंटर पर आक्रमण किया। कुछ कहना-सुनना बेकार था। अंततः दिलबहादुर ने गुत्थम-गुत्थी में उस नौजवान का चाकू से, उसी के चाकू से खून कर दिया।

नेशनल सिनेमा की तरफ भागता हुआ यह दिलबहादुर पुलिस

“इसे थाने ले चलो”—इंस्पेक्टर ने कहा। दिलबहादुर थाने ले जाया गया।

“तुम सीमा कपूर को जानते हो?” इंस्पेक्टर ने दिलबहादुर से पूछा।

“कौन सीमा कपूर साहब?”

“बनता है?” इंस्पेक्टर ने कड़कती आवाज में कहा। “वही सीमा कपूर जिसकी लाश सिनेमा हाल के अहाते में पाई गई थी...।”

“मैं किसी सीमा कपूर को नहीं जानता साहब।” दिलबहादुर करीब-करीब रो पड़ा और गिड़गिड़ाते हुए कहा—“साहब सच-सच कहता हूं कि मैं किसी सीमा कपूर को नहीं जानता।”

“इसके मालिक को बुलाओ।”

“आपका नाम?”

"अजीत प्रसाद दीवान।"

"आप पारिजात होटल के मालिक हैं?"

"जी"

"इसे पहचानते हो?"

दिलबहादुर की आंखों में आशा चमक उठी। उसके होंठ फड़फड़ाने लगे कि अजीत दीवाना तुरंत कहेंगे कि हां पहचानता हूं, यह मेरे यहां कैशियर का काम करता है। लेकिन हुआ ठीक इसके विपरीत। जब अजीत दीवाना ने यह कहा, "नहीं साहब मैं किसी को नहीं पहचानता।"

दिलबहादुर हक्का-बक्का रह गया। बड़ा ही कमीना आदमी है यह अजीत दीवाना? वह अजीत को लाल-लाल आंखों से देख रहा था और गुस्से के मारे उसके नथुने फड़क रहे थे। इंस्पेक्टर को अजीत दीवाना संदेहास्पद व्यक्ति जान पड़ा। उसने उसे जाने दिया और दिलबहादुर को हिरासत में ले लिया गया।

इस घटना के दस रोज बाद पुलिस ने अपने दो आदमी पारिजात होटल भेजे। रात के दस बजे थे—दिसंबर महीने की कड़कती सर्दी और घना कुहासा। उन दोनों ने पारिजात होटल के मालिक अजीत दीवाना को अपने पास बुलाया, बिठाया और कहा—"शराब मिलेगी...यहां?"

पहले तो अजीत दीवाना ने डर और भय से ना-नुकर की लेकिन दोनों व्यक्तियों ने कहा—पैसे की चिंता मत करो...सिर्फ माल चाहिए। इस बीच एक ने सौ रुपये का नोट निकाला। अजीत ने कुल चार सौ रुपये लिए। पीछे के कमरे से वह शराब की दो बोतल, सोडा, कबाब और दूसरे सामान ले आया। फिर कहा—"साहब, जरा जल्दी करना, रात में अक्सर पुलिस वाले यहां आते रहते हैं।"

"अच्छा?"

"आकर क्या करते हैं?"

"कुछ नहीं साहब।....अब पुलिस वालों का क्या साहब? पूछ बैठेंगे कि क्या आप किसी सीमा कपूर को जानते हैं?"

"सीमा कपूर को?"

"हां साहब....सीमा कपूर या कोई भी। पुलिस तो यही पूछ सकती है साहब।"

कहते-कहते अजीत दीवाना बाहर की ओर देखने लगता है लेकिन धुंध और कुहासा इतना अधिक घना है कि उसे कुछ दिखाई नहीं देता।

"हमारे लिए यही ठीक रहेगा अजीत सेठ कि हम शीघ्र फारिग हो लें, क्यों अजीत सेठ?"

दोनों ने तीन गिलास मंगवाए और तीन पेग बनाए। एक गिलास उन्होंने अजीत सेठ की ओर बढ़ाया। वह तेजी से गिलास की ओर झपटा और एक ही सांस में खाली कर गया। उन दोनों ने दूसरी पेग बनाई और उसे भी वह खाली कर गया। पुलिस के उन दोनों लोगों को ऐसा लगा मानों अब वक्त आ गया है कि इस आदमी से सब कुछ उगलवा लेना चाहिए।

"अजीत सेठ आप कबाब तो खाइए?" एक ने कहा। अजीत दीवाना शुरू हो गया। फिर कहा—"साहब हमें तो दारू इसी तरह मिल जाती है कि आप जैसे रईस लोग 'पारिजात' में आते हैं और 'सत्संग' होता रहता है।....एक बार एक बाबूजी किसी कपूर के साथ आए थे साहब। यहीं रुके भी थे।"

उन दोनों व्यक्तियों को लगा कि ठीक समय अब आ गया....एक ने दूसरे को संकेत की भाषा में कहा कि शोले में रखा 'टेप' आन कर दो। उसने वैसा ही किया।

"हां तो वह कौन थे अजीत सेठ? वह बाबूजी? वह कपूर?"

"वह सीमा कपूर साहेब। एम.ए. क्लास में यहीं पढ़ती थी....शादी-शुदा थी....बड़ी माडर्न लड़की लेकिन एक धोती-धारी टीचर से शादी हो गई सीमा कपूर की। ससुराल गई तो छह महीने भी रह ना पाई सीमा कपूर। वह धोती-धारी परेशान। बाद में डाक्टर से नकली सर्टिफिकेट ले लिया कि उसके स्तन में कैंसर है और वह कुछ ही महीनों की मेहमान है....ताकि उसकी ससुराल के लोग उस पर जरा भी ध्यान न दें और वह आजाद रह सके।"

"तो सीमा कपूर फिर वापस आ गई?"

"हां साहब। थी तो साधारण घर की किन्तु पैसे उसके पास बहुत थे साहब।"

"कैसे?"

"बड़े-बड़े होटलों में जाती थी साहब।....साहब यहां से थोड़ी ही दूर पर संत नगर नाम का एक मुहल्ला है, मेरा कैशियर था न साहब, वह दिलबहादुर साहब....वहीं....उसके बाप की दुकान थी, पान बेचने की, वहां भी जाती थी साहब....वहां से उसे पता चलता था कि उसे किसने कहां बुलाया है।"

"वह यहां की युनिवर्सिटी में पढ़ती थी? तब तो किसी लड़के के साथ भी उसकी दोस्ती होगी? मेरा मतलब कि 'पारिजात होटल' में वह अपने किसी 'खास' दोस्त के साथ तो आती-जाती होगी?"

"कुछ सोचो अजीत सेठ?" दूसरे ने कहा।

अजीत फिर खामोश।

पुलिस के दोनों आदमी चिंतित हुए। कहीं अजीत सेठ सो ना जाए। उन्होंने उसे झकझोरा, हिलाया-डुलाया। कहा—"साहब किसी के साथ आती तब तो....वैसे वह जल्दी-जल्दी अपने यार-दोस्त बदल लेती थी।

"पर किसी खास दोस्त के साथ भी तो वह रहती ही होगी?" दूसरे ने कहा।

"एक रिक्शा वाला था साहब। बराबर डीपी के रिक्शा में जाती थी।"

"कहां रहता है वह रिक्शा वाला?"

"वह युनिवर्सिटी में ही रहता है। उसका नाम तो मुझे नहीं मालूम लेकिन लोग उसे बंशी कह कर पुकारते हैं।"

"तुम्हारा कैशियर सीमा को कितना जानता था?"

"पता नहीं साहब। पर मेरे जानते दोनों में कोई जान-पहचान नहीं थी।"

"जिस रोज नेशनल सिनेमा में कत्ल हुआ सीमा कपूर का उस रोज रात के बारह बजे होटल पारिजात पर ही हमला क्यों हुआ?"

"लुटेरों का क्या है साहब? कहीं पर भी हमला कर सकते हैं। किसी भी होटल को लूट सकते हैं।"

"तुमने पुलिस में क्या बताया?"

अजीत दीवाना हंसने लगा.... ठठाकर हंस पड़ा। "साहब, हम क्या पागल हैं जो कह दें कि एक कातिल हमारे यहां नौकर है? पर उसे हम ही छोड़ाएंगे साहब। गरीब आदमी है और हमारे होटल की रक्षा के लिए ही तो उसने खून किया है?"

रात के ठीक बारह बज कर पांच मिनट हो रहे थे। पुलिस के दोनों आदमी उठ खड़े हुए। थाना में टेलीफोन किया। गाड़ी आई और अजीत दीवाना को गिरफ्तार कर लिया गया।

नावालिंग प्रसाद की बातों में सच्चाई हो सकती है क्योंकि यह दिलबहादुर शांतिर बदमाश और सिर्फ बदमाश ही लगता है। पान की दुकान उसके पिता की दुकान है। उसके मरणोपरांत बस दिलबहादुर ही दुकान का एकमात्र वारिस है।

मैं किसी जरूरी काम से फिर संत नगर से बाहर जा रहा था कि मुझे निशा वर्मा मिल गई। हालांकि निशा वर्मा मेरे पड़ोस में ही रहती है किन्तु मैंने कभी उससे बात न की, न ही कभी इसकी जरूरत ही महसूस हुई। फिर यह संतनगर मुहल्ला इतना रूढ़िवादी है कि अगर निशा वर्मा से किसी ने मेरी बातचीत सुन-देख ली तो यही एक घटना हो जाएगी। मैं निशा वर्मा को सिर्फ इतना ही जानता हूं कि वह एक खूबसूरत, अच्छी साफ-सुथरी लड़की है, मेरे पड़ोस में रहती है।

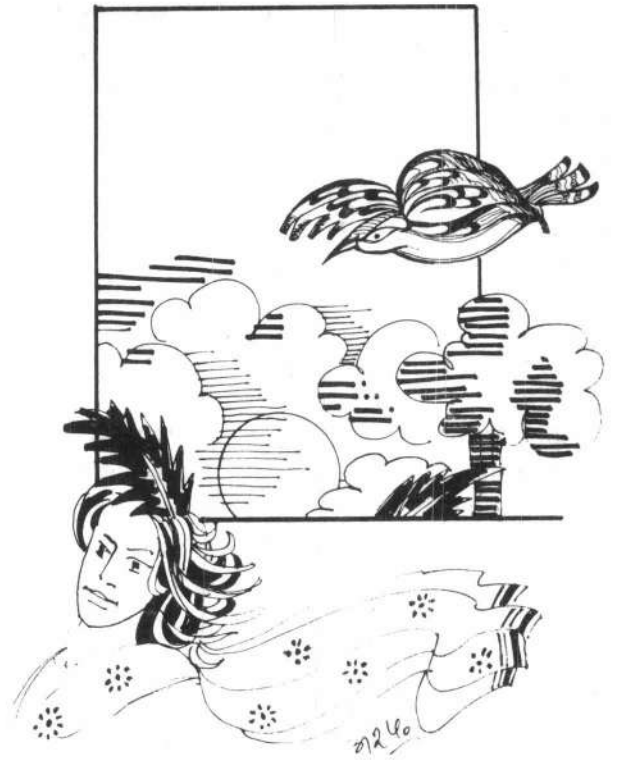
मुझे उस रोज की घटना याद आती है जब दिलबहादुर और मोहन निशा वर्मा के विषय में बातें कर रहे थे। उस रोज के बाद मुझे मोहन वहां फिर कभी नहीं मिला। उसके अचानक लापता होने की क्या वजह हो सकती है। मुझे याद है कि उस शाम जब मोहन को मैं अश्लील पत्रिकाएं पढ़ने से रोक रहा था तब कहीं न कहीं उसके मन में एक अपराध-भाव जरूर था और वह स्वयं को अधिक देर तक मेरे समक्ष रख नहीं पाया था।.... संत नगर से बाहर निकल जब मैं नेशनल टाकीज सिनेमा के पास से गुजर रहा था तब शिवालिंग प्रसाद मिल गए। मैं जानता हूं, शिवालिंग प्रसाद जरूर कोई पिक्चर देखने आए होंगे या बाहर से ही सिनेमा के पोस्टर देख कर लौट रहे होंगे। उन्होंने मुझे देखा तो चहक पड़े।

"क्या हाल-चाल है रवि बाबू?"

"भाई, मैं परेशान हूं। क्या तुम मोहन का पता बता सकते हो?"

"कौन मोहन साहब? वह नयनसुख मजीठिया का बेटा?"

"यह तो मैं नहीं जानता किन्तु वही लड़का जो दिलबहादुर की दुकान...."



"समझ गया साहब। समझ गया। वह मोहन साहब। वह तो लापता है साहब।"

"लापता है?"

"हां साहब।" फिर तनिक सटते हुए शिवालिंग प्रसाद ने कहा— "साहब वह जो दिलबहादुर है न, वह बड़ा बदमाश है। अब मोहन था तो साहब बेरोजगार ही। दिलबहादुर उससे कई तरह के गलत-सलत काम कराता था साहब। तरह-तरह के नशीले पदार्थ से लेकर अश्लील पत्रिकाएं भेजने तक का धंधा वह उससे कराता था। इधर पुलिस भी उसके पीछे पड़ गई थी साहब।"

"तुम लोग इस दिलबहादुर का विरोध क्यों नहीं करते? क्या तुम ऐसा नहीं सोचते कि वह एक असामाजिक तत्व है और संत नगर में कई तरह की असुविधाएं सिर्फ उसकी वजह से हैं?"

"बात ठीक है। रवि बाबू, यह दिलबहादुर आज से दस वर्ष पूर्व जेल से छूटकर इस मुहल्ले में आया था तब से...."

"शिवालिंग प्रसाद जी! आप और नावालिंग जी संत नगर में सर्वाधिक प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। अब छोटी-मोटी घटनाएं भला कहां नहीं घटती हैं पर आप लोगों को इस दिलबहादुर को सबक तो सिखाना ही चाहिए।"

"किससे लड़ाई मोल ले रहे हो रवि बाबू। उससे कोई इज्जतदार भला क्यों मुंह लगाए। और तो और, संत नगर के बल पर उसकी दुकान नहीं चलती। दिलबहादुर खुद भी कहता है कि उसकी दुकानदारी बाहर वालों की बदौलत ही चलती है। न तो दिलबहादुर को, न ही संत नगर को एक-दूसरे से कोई रिश्ता है।"

शिवालिग के जाने के बाद मैं आगे निकल गया। सोचता रहा कि दिलबहादुर एक अपराधी है। लेकिन यह सिर्फ दिलबहादुर का ही मामला नहीं है। अपराधी, अपराध करता है और उसकी देखा-देखी नए-नए अपराधी विकसित होते हैं। चिंता की बात यही है। यह नया अपराधी मोहन जैसा बेरोजगार ग्रेजुएट भी हो सकता है और कोई मासूम बच्चा भी। सवाल इसे खत्म करने का है और क्या यह खत्म हो भी सकेगा? क्या हमारा समाज इन तत्वों को बरदाश्त नहीं कर रहा है? क्या ऐसे ही लोग हमारे नियंता नहीं हैं?

मैं नेशनल के पास ही ठिठक जाता हूँ...यहीं सीमा कपूर की हत्या हुई थी। कौन लोग होंगे वे हत्यारे? किन लोगों ने की होगी हत्या सीमा कपूर की? क्या ये ही तो वे हत्यारे नहीं जो सामने कैफे में बैठे हैं, वे सफारी सूट में चमचमाते लोग। हो सकता है। हर अपराधी, हर हत्यारा सफेदपोश होता है। हर ईमानदार, चरित्रवान फटेहाल होता है। इस चरित्रवान होने की सजा पग-पग पर धक्के खाकर वह पाता है। आज का सच यही है।...मैं फिर मोहन के विषय में सोचता हूँ। उसके जैसे कई 'मोहनों' के बारे में सोचता हूँ। मैं निशा वर्मा के माध्यम से उस जैसी कई कुमारी लड़कियों के विषय में सोचता हूँ। क्या ये सब इसी तरह जीते रहेंगे?

लौटते हुए काफी देर हो चुकी थी और मैं स्वयं को भारी महसूस कर रहा था। रास्ते में दिलबहादुर की दुकान पर रुकना चाहा किन्तु वहाँ पांच-छह 'मुस्टंडे' बैठे थे। जैसे ही मैं गुजरा कि एक ने फस्की कसी—"महात्मा गांधी बन गया है इन दिनों।" दूसरा बोला—"मुहल्ला सुधारने का जिम्मा लिया है।" तीसरे ने कहा—"निशा वर्मा इसकी बहन लगती है।" चौथा बोला—"सफाया कर दो निशा वर्मा का।" पांचवें ने कहा—"शुभ दिन तय करो गुरु।"

मैं घर लौट आया। कितना बेकार हो गया है संत नगर। क्या यही सब होता है (अच्छे) मुहल्लों में। मैं तो शुरू से ही इस पक्ष में नहीं था कि यहाँ रहा जाए लेकिन पिताजी के आशीर्वाद का क्या करूँ? क्या कहूँ? हमेशा यही कहते रहे कि "जो तुम्हारे आस-पास के लोग हैं उनकी जिन्दगी देखकर भी हमें जीना चाहिए। वह भी जीवन है।"

मेरा मन अशांत है। यह सब कहाँ से उग आया है? ठीक लोगों की ठीक बातें क्यों नहीं सुनी जाती? कब सच्चाई सुनी जाएगी? कब? मुझे रात में नींद नहीं आती और अपनी छत पर चला जाता हूँ।

पड़ोस से तेज आवाजें आ रही हैं। निशा वर्मा के पिताजी कह रहे हैं—"पहले ही मना किया था, दिलबहादुर की दुकान वाले रास्ते से कालेज मत जाया कर।" निशा की माँ कहती है—"इसका कालेज जाना बंद कर दो, बहुत हो चुकी इसकी पढ़ाई-लिखाई।" "लेकिन उससे क्या होगा? इसका कैरियर चौपट हो जाएगा।..." पिता फिर बोले।

इसके बाद खामोशी।

शिवालिग प्रसाद शराब के नशे में धुत्त अंट-शंट बकते हुए घर की ओर लड़खड़ाते कदमों से चले आ रहे हैं...

ईट का मजहब

मार्टिन जान 'अजनबी'

धरती की विशाल छाती से मिट्टी खोदी गई। उस समय मिट्टी की कोई जात नहीं थी। कोई मजहब नहीं था।

अलग-अलग समुदायों के सैकड़ों हाथों ने मिट्टी को ईट की शक्ल में गढ़ा, संवारा। उस समय भी ईट की कोई जात नहीं थी। कोई मजहब नहीं था।

ईट से ईट जोड़ी गई। बरस भर बाद मस्जिद तैयार हुई। इबादत शुरू हुई। उस समय भी ईट की कोई जात नहीं थी। कोई मजहब नहीं था।

कुछ माह बीते होंगे कि अचानक किसी वजह से मस्जिद की कुछ ईंटें खिसककर जमीन पर गिर पड़ीं।

पंडित रामनाथ के बच्चे दीपावली के अवसर पर अपने घर के सामने 'दीवाली घर' बनाने के लिए उन ईंटों को वहाँ से उठा ले आए और घर बनाने लगे।

पंडित रामनाथ को हैरानी हुई। बच्चे आखिर ईंटें लाए कहाँ से? पूछने पर जब मालूम हुआ तो बरस पड़े, पत्नी और बच्चों पर, ...कुछ तो ख्याल किया होता अपने...मस्जिद की ईंटों से यह 'घर' नहीं बन सकता...जा, जा, फेंक आ इन ईंटों को!

बच्चों ने आज्ञा का पालन किया। अब ईंटें एक जाति विशेष की हो गईं। एक मजहब विशेष की हो गईं। □

लोकोपाड़ा, पो. भोजूडीह,
जिला-धनबाद (बिहार)

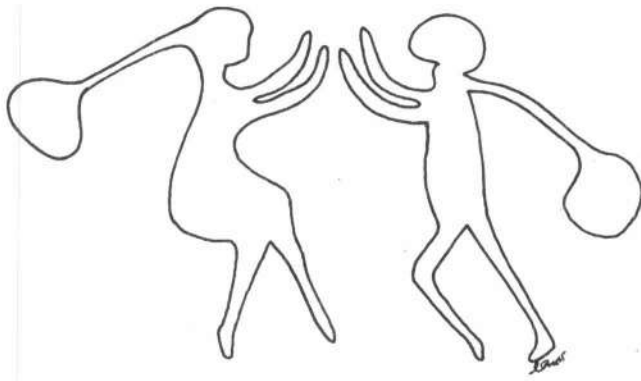
रात के दो बज चुके हैं। संतनगर सो गया है। एक अलस पुरवा का झोंका सबको मस्त कर गया है...आकाश से चांद विहंसता है धरती को देखकर। नहीं आशा मरी नहीं है। आशाएं मरा नहीं करतीं। निशा वर्मा कालेज जाएगी। वह खूब नाम करेगी। मोहन लौट आएगा। रूढ़ियां टूटेंगी। संतनगर संगठित होकर 'गलत' का विरोध करेगा...यह विश्वास मेरे मन में है...यह होगा।

दूसरी सुबह पूरा मुहल्ला एकजुटता में नजर आया जब यह पता चला कि मोहन आ गया है...किसी गलत काम की वजह से वह पुलिस की गिरफ्त में आ चुका था...अब छूटा है...यह भी पता चला कि पुलिस दिलबहादुर सहित उसके छह साथियों को सरगर्मी से तलाश रही है और वे सब फरार हैं।

पहली बार संतनगर गहरी नींद और जड़ता से उबरा है...सुबह की ठंडी हवा सुहावनी लगती है। नीम के पेड़ पर बैठा एक पक्षी खुले, नीले आकाश में दूर तक उड़ान भरता है। □

गगनांचल,

आई. सी. सी. आर., आई. पी. एस्टेट,
नई दिल्ली-110002



शैलाश्रयों पर अंकित आदिम नृत्य

डा. नन्दिता शर्मा

मानवीय अभिव्यक्ति की सहज उल्लसित भावनाएं आनन्दानुभूति की चरमावस्था में विभिन्न हाव-भाव, पद व हस्त मुद्राओं के जिस तारतम्य में प्रकट होती हैं उन्हीं की एकरूपता है नृत्य। सभ्यता के क्रमबद्ध चरणों को पार करता हुआ मानव आदिम युग में भी अभिव्यक्ति के इस सशक्त रूप से अनभिज्ञ न था। भाषात्मक अभिव्यक्ति से भी पूर्व नृत्य मानव की अनुभूतियों का सम्भवतः सर्वाधिक सम्प्रेषणीय माध्यम था। यही कारण है कि प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में आखेट दृश्यों के बाद आदि मानव के नृत्य मुद्रा चित्रों की संख्या ही सबसे अधिक है।

यूं तो प्रायः अधिकांश शिला-चित्रों में नृत्य-दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु विन्ध्य व कैमूर के शैलाश्रयों में इनकी संख्या सर्वाधिक है। आज भी विन्ध्यवासी आदिवासी जब मुरध भाव से एक-दूसरे की कमर में हाथ डाले हुए करमा की लय पर थिरकते हैं तो लगता है जैसे हजारों वर्ष पूर्व अंकित नृत्योल्लास शैलाश्रयों से उतर कर विन्ध्य की घाटियों में मूर्तमान हो उठा है—

"हो s राम क रमइया
तोर केसिया बा जैसे क़ारी बवरिया
बहुतइ नीक लागे हो गोरी
बहुतइ नीक लागे....।"



नृत्य-गीत की यही लयात्मकता विन्ध्य की शिलाओं पर चित्रात्मक अभिव्यक्ति के रूप में आदिम संस्कृति का प्रमाणिक दस्तावेज बनी दृष्टिगोचर होती है। विन्ध्य व कैमूर की लिखनिया, कंडाकोट, मूड़ा, मुक्खादरी, सोरहो-घाट, घोड़मंगरा, हरनाहरनी, ढोकवा महारानी, कउवाखोह, दुआरा आदि अनेक शैलाश्रयों पर प्रागैतिहासिक आदिम मानव द्वारा चित्रित नृत्प-दृश्य तत्कालीन मानव की सामाजिक, सामूहिक, सांस्कृतिक व आमोदवृत्ति का परिचय देते हैं। कुछ नृत्य-दृश्यों से धार्मिक व अनुष्ठानिक क्रियाकलापों का भी बोध होता है। यह नृत्य-दृश्य प्रायः दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के नृत्य-दृश्य वे हैं जो हृदय की सहज आनन्द भावना के प्रकाशन के उद्देश्य से अंकित किए गए हैं तथा दूसरे प्रकार के नृत्य-दृश्यों का चित्रांकन आखेट से सम्बन्धित अनुष्ठानिक आयोजन के रूप में है। दोनों ही स्थितियां यह संकेत करती हैं कि हजारों वर्ष पूर्व भी मानव नृत्य, वाद्य व संगीत के प्रति अभिरुचि रखता था। तभी तो आदिवासी जनजातियों में नृत्य की यह अमूल्य धरोहर आज भी मौजूद है और विभिन्न अवसरों पर करमा, कोलदहकी, नटुआ, डोमकच, शैला, कलैया, पूजन व फरीं आदि नृत्यों के माध्यम से लोक संस्कृति की सुगन्ध का प्रसारण करती रहती है।

विन्ध्य के शैलाश्रयों पर अंकित यह नृत्य-दृश्य विभिन्न प्रकार के हैं। मिर्जापुर रॉबर्ट्सगंज से लगभग बारह किलोमीटर दूर पश्चिम दक्षिण दिशा में कंडाकोट के पास वाली लिखनिया गुफा में चित्रित एक दृश्य में चार नर्तक आमने-सामने हाथ उठाए हुए वाद्य यंत्र थामे एक ही दिशा में जाते हुए चित्रित किए गए हैं। यहीं पर गेरुएं रंग से चित्रित एक अन्य दृश्य में पांच व्यक्ति हाथ में हाथ लिए नृत्य कर रहे हैं। पद-संचालन का एक समान न होना स्वच्छन्द नृत्योल्लास की भावना को प्रकट करता है। कुछ नर्तक सरलीकृत आयताकार रूप में बनाए गए हैं। ऊपर एक रेखा खींच कर धड़ व सिर के भाग तथा दो रेखाओं से हाथ व नीचे दो रेखाओं से पैर बनाए गए हैं। ऐसी प्रत्येक आकृति के बाद दोनों हाथ सामने की ओर उठाए व धनुष थामे एक मानवीय आकृति को नृत्यरत अंकित किया गया है।

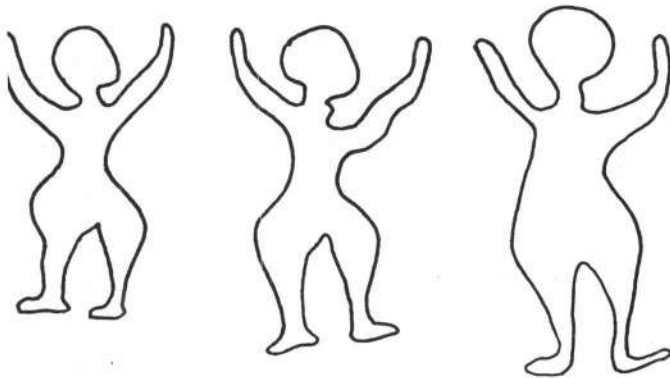
आयताकार नृत्यरत आकृतियां मुक्खादरी के शैलाश्रयों पर भी दिखाई देती हैं। यह आकृतियां गहरे गेरुए रंग से बनाई गई हैं।



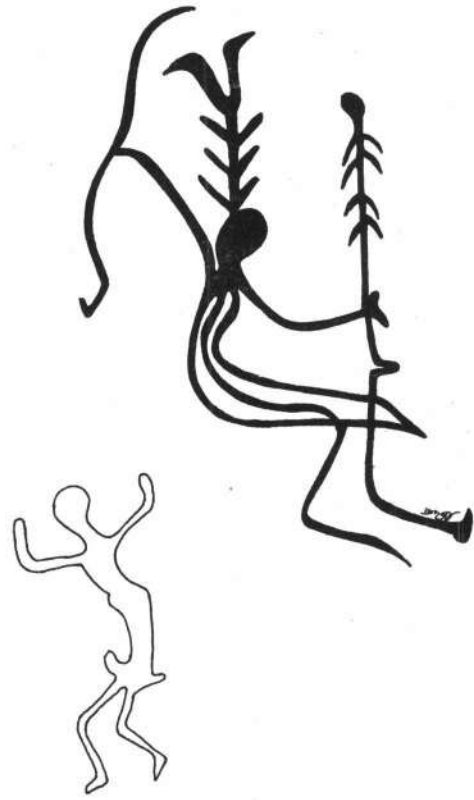
अन्य नृत्यमग्न आकृतियां भी यहां चित्रित हैं जिनमें बाईं ओर आठ तथा दाईं ओर पांच आकृतियां कंधों के ऊपर हाथ उठाए हुए एक ही दिशा की ओर अग्रसर अंकित की गई हैं। मूड़ा कंडाकोट, तुरियानी, हथबनवा, राजा का बैठका आदि स्थानों पर गोल सिर वाले नर्तक हाथ में हाथ थामे समूह रूप में चित्रित किए गए हैं। घोड़मंगरा के शिलाचित्रों में चार आकृतियां हाथ उठाए हुए नृत्य करती हुई जान पड़ती हैं। हालांकि इन आकृतियों में मानवीयता का आभास कम होता है फिर भी उनमें आदिम मानव की अभिव्यक्ति की सरलता को बखूबी देखा जा सकता है। इसकी तुलना में झरिया नाला के शैलाश्रयों में अंकित नृत्य मुद्राओं वाली आकृतियां स्पष्ट हैं और इन्हें पूरक शैली में सपाट भरा गया है। राजापुर के दक्षिण-पश्चिम में कइरी पहाड़ी की एक शिला पर एक नृत्यरत युग्म का अंकन है जिसमें उन्हें दोनों हाथों में धनुष बाण थामे बांह, धड़, गर्दन व पैर को लयात्मक गति से उठाकर नृत्य करते हुए अंकित किया गया है।

मनोरंजन की भावना से प्रेरित कई नृत्य दृश्य इतने स्वाभाविक हैं कि उन्हें देखकर विश्वास ही नहीं होता कि वे आदिम मानव द्वारा चित्रित किए गए हैं। विन्ध्य के दुअरा नामक शैलाश्रय पर दो आकृतियों को परस्पर आमने-सामने नृत्य मुद्रा में अंकित किया गया है। पद-संचालन, हस्तमुद्रा एवं हवा में लहराती वेणियां नृत्य की लयात्मकता, गतिशीलता व उल्लास को अभिव्यक्त करती हैं।

रॉबर्ट्सगंज के निकट चनाइनमान के शैलाश्रय पर अंकित नौका में सवार मानव समूह का नृत्य-दृश्य अत्यंत रोचक है जिसका उल्लेख सर्वप्रथम डा. अर्जुनदास केसरी ने अपनी पुस्तक—'शैलाश्रित गुहाचित्र' में किया है। गेरुएं लाल रंग से अंकित नौका विहार के इस चित्र में वाद्य यंत्र बजाते हुए तथा उन्मुक्त मुद्रा में थिरकते हुए नर-नारी आदिम मानव की आमोद-प्रमोद अभिरुचि का जीवन्त प्रतीक बन पड़े हैं।



विन्ध्य के इन शैलाश्रयों पर अंकित कुछ नृत्य-दृश्य अनुष्ठान तंत्र मंत्र व जादू टोने की भावना से प्रेरित होकर बनाए गए हैं। आखेट पर जाने से पूर्व शक्ति-सम्बर्द्धन तथा आत्मिक बल प्राप्त करने की इच्छा से सम्भवतया इस प्रकार के चित्रों का निर्माण किया जाता था। अनुष्ठानिक आयोजनों में पशु खालों व मुखौटों को ओढ़ कर स्वांग भरने व अभिनय करने के उदाहरण भी



नृत्य-दृश्यों में दिखाई देते हैं। ऐसे चित्रों में कंडाकोट की आकृतियां अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसमें तीन मानवीय आकृतियों को विभिन्न पशुओं के मुखौटे धारण किए हुए, कमर पर हाथ रखे व पदाघात करते हुए दर्शाया गया है।

इसी प्रकार का एक अनुष्ठानिक नृत्य-दृश्य कउवाखोह के शैलाश्रय पर अंकित किया गया मिलता है। इसमें एक विशिष्ट पुरुष आकृति को एक हाथ में कमान व दूसरे में हारपून उठाए हुए सिर पर पंखों वाला मुकुट लगाए हुए नृत्य मुद्रा में चित्रित किया गया है। नर्तक का वृहद आकार, पद-संचालन व नृत्य मुद्रा उसकी विशिष्टता का बोध कराते हैं। इसी आकृति के निकट एक आकृति को मुंह से वाद्य यंत्र बजाते हुए तथा अन्य आकृतियों को नृत्य करते हुए दर्शाया गया है। आज भी गोंड जनजाति में शिव की पूजा-अर्चना के समय नर्तक डमरू, त्रिशूल व निशान लेकर नृत्य करते हैं। नवरात्रि की अष्टमी व नवमी को भी ओझा द्वारा इसी प्रकार का नृत्य सम्पन्न किया जाता है। विन्ध्य के शैलाश्रयों पर अंकित यह सभी नृत्य-दृश्य भंगिमा, अंग-संचालन, लय, गति व शैली की दृष्टि से आदिम कलाकार की श्रेष्ठता व कार्यकुशलता के प्रमाण हैं।

इन नृत्य-दृश्यों में मानवीय आकृतियां सरलीकृत रूप में सपाट रंगों द्वारा भरकर अथवा रेखानुकृति के रूप में बनाई गई हैं। आयताकार आकृतियां आड़ी-तिरछी रेखाओं द्वारा भरकर अलंकारिक रूप में चित्रित की गई हैं। प्रायः अधिकांश चित्र गेरुएं

घाव

क्षितिज शर्मा

करीब डेढ़ मील इलाके में फैले चीड़ के ऊंचे दरख्तों के बाद, धिंगारु की कंटली झाड़ियों के खत्म होते ही, गांव की सरहद शुरू हो जाती है। एक-दो-तीन नहीं, दसियों सीढ़ीनुमा खेत, उतरते-उतरते गौशालाओं की जड़ तक पहुंच जाते हैं। वहां से गांव की बसासत तक साग-सब्जी की छोटी-छोटी बाड़ियां जहां पूरी होती हैं, मोहन सिंह कड़ाकोटी का घर वहीं पर है। एकदम गांव के सिरहाने पर। गांव की सीधी और तितर-बितर कतारें वहीं से शुरू होती हैं। एक तरह से, चौराहा है उसके घर का पटांगण। दूसरे गांवों को जाने वाले तीनों तरफ के रास्ते उसके पटांगण से होकर जाते हैं और चौथी तरफ पनघट-गोचर व घास-लकड़ी को जाने वाली पगडंडी उसके पिछवाड़े से। जंगल के बाद जो पांच-सात दुकानों का बाजार है, उसका रास्ता भी, उसके घुरुटिया (बगल की दीवार) से सट कर निकलता है।

घास-लकड़ी को जाने वाले, दराती और कुल्हाड़ी की धार को, उसके पटांगण की हदबंदी पर रखे चिकने पत्थर पर पैनी करने के बाद ही आगे बढ़ते हैं। बाहर के लोगों के लिए भी, इधर के गांवों

को जाने के लिए, उसके आंगन को पार करने के अलावा और कोई रास्ता नहीं ठहरा। इस तरह गांव और गांव की चारों दिशाओं का चश्मदीद गवाह है मोहन सिंह कड़ाकोटी का घर।

लोग उसके पटांगण से होकर जाएं और वह उनसे न पूछे, "कहां की दौड़ हो रही है आज?...कहां के हो महाराज, कितनी दूर जाना है?" तो असभ्यता हो जाएगी। घर के दरवाजे पर आए आदमी को पानी-तम्बाकू के लिए पूछना, छाया में कुछ देर सुस्ताने को कहना, औपचारिकता नहीं धर्म है और कर्तव्य भी। वरना चौराहे वाले मकान का नाम-बदनाम होने में देर कितनी लगती है। दुनिया में अगर इतना भी नहीं हुआ तो मनुष्य योनि ना के बराबर ठहरी।

इसलिए चाख में, दरवाजे के पीछे, आग के बरसे के साथ तम्बाकू का डिब्बा और ताजे पानी से भरी दो चिल्लमें हमेशा रखता है। अगर ब्राह्मण हो तो इस चिल्लम से पियो और ठाकुर हो तो उससे। यदि शिल्पकार (हरिजन) आ जाए तो हुक्का भर कर पकड़ा दिया, केले के पत्तों की सांफी को हुक्के के छेद में घुसा कर। पानी का घड़ा चाख की दीवार पर बने आले पर रखा रहता है, लोटे से ढक कर। चाय-बाय का ज्यादा बवाल नहीं किया जा सकता। कोई खास ही आ गया तो दूसरी बात ठहरी।

इस बात को सभी मानते हैं, धन का कितना भी गरीब हो मोहन सिंह, मन का धनी ठहरा। धन का गरीब वह हुआ भी। भाई-बंधु ठहरे सब अलग-अलग। कोई इस शहर में तो कोई उस शहर में। मदद कोई किसी की करता नहीं। एक दिन की जो बात होती तो किसी भाई से कुछ मांग लेता। यह तो उमर भर का मामला ठहरा। फिर, जब से न्यारे हो गए तो किस बात के भाई। बिरादर हो गए तब से। चिट्ठी-पत्री तक नहीं चलती अब। कोई आया-गया तो खबर पूछ ली, बस।



लड़का इतना बड़ा नहीं है, जिसे परदेश भेज कर और महीने दो महीने में कुछ पाने की उम्मीद कर ले। जमाना बदल गया आज। पहले जैसी बात नहीं रही कि जहां बारह-तेरह का हुआ लड़का, भेज दिया किसी के साथ। भांडे-बर्तन मांज कर ही, भेजता रहा कुछ न कुछ, घर चलाने को।

चार हाथ जमीन के अलावा दूसरा सहारा नहीं ठहरा उसके पास। चार बोरी हो, दो बोरी हो, चाहे एक, उसी में गुजारा करना ठहरा। भकार भरने के दिन तो अब सपने जैसी बात हो गई। न पहले जैसी मेहनत रही, न करने वाले।

सर्दियों में थोड़ी मेहनत-मजदूरी कर लेता है। काम मिल जाता है। बदन में जान है। इतनी कि पतरौल के डर से रात में काटे गए बांज के पूरे पेड़ को, पत्तों समेत, कंधे पर रखकर एक दौड़ में घर पहुंचा देता है। बचपन में, सबसे छोटा होने के नाते, घी-दूध अच्छा मिल गया था। उस वक्त को याद कर मोहन सिंह, अब भी आनन्दित हो उठता है—वो जमाना ही और ठहरा। अन्न पूरा न भी मिले, छाछ, साग-सब्जी मिल जाती थी खूब। आज तक कोई रोग भी नहीं लगा, इसलिए भी ताकत बची रह गई। वरना यहां पैतालीस पार करते ही, हड्डियां मांस के ऊपर आने लगती हैं।

सही में, मजदूरी माघ-पूष दो महीने हो पाती है। आधे मगशीर तक का समय, खेती और घास-पास बटोरने में लग जाता है। माघ खत्म होते-होते मिर्च की बुवाई शुरू हुई नहीं कि खेती में कुछ न कुछ लगा ठहरा फिर। धान, झुंगरा बोने से लेकर गोहूँ-जौ की कटाई और मडुवा बोने तक बैशाख क्या आधा जेठ निकल गया। फिर एक महीने कोई खास काम नहीं भी हुआ आदमी के हाथ का, तो तपती दोपहरी में कौन चला सकता है कुदाल-फावड़ा।

इस बार की सर्दी बेकार चली गई। उम्र भर की परेशानी कर गई। घर के लिए जलाने की लकड़ियां बना रहा था। चीड़ की मोटी टहनी के एक सिरे को पांव से दबाकर दूसरे सिरे पर जैसे ही चोट मारी, कुल्हाड़ी छिटक गई। सीधी पांव पर आ पड़ी। दप् से, पैतावे तक घुसकर, पांव के दो फाड़ कर गई। हा-हा, बिल्लाकारी मच गई। खून इतना बहा कि देखा नहीं गया। लगा, अब शायद ही खून की कोई बूंद बची हो भीतर। कटे पैर को दोनों हाथों से पकड़कर, एक पांव से धूम-धूम करते हुए किसी तरह चाख तक पहुंचा। जितने उपाय तत्काल हो सकते थे, कर लिए। घाव में कपड़ा जलाकर डाला, चीनी पास कर डाली, क्यबें का रस निचोड़ कर डाला। पर खून बहना बंद नहीं हुआ। आखिर लीसा पिघलाकर भर दिया फाड़ों के बीच में और कपड़े से कसकर बांध दिया। यही अन्तिम इलाज था, उसकी सामर्थ्य का भी और लोगों के सुझाए उपायों का भी। उसके बाद इतनी कमजोरी आई कि दिशा जंगल जाना भी मुश्किल हो गया। कई दिनों तक घरवाली पकड़कर ले जाती रही।

सामर्थ्य इतनी भी नहीं रही कि बेटा अगर हल की मूठ पकड़ ले तो वह बैलों को हांक दे। कम से कम मिर्च की बुवाई हो जाए। मिर्च और अघैल (पहले होने वाले) धान की बुवाई न होने के बराबर हुई। घरवाली ने बीज छिड़क दिए और तेरह-चौदह साल के लड़के ने किसी तरह हल की मूठ पकड़कर, आढ़ी-तिरछी

रेखाएं खींच दीं। वह भी तब, जब मां आगे से जुए को पकड़कर बैलों को नियंत्रित करती रही।

फागून खत्म होने तक पैर पकता रहा। जमीन पर टेका नहीं गया। चैत के आधे से दो-चार रोज पहले, लाठी टेक कर, घर से बाहर निकलने लायक हो पाया। वैशाख जाकर लाठी के सहारे खेत तक जाने लगा कि लड़के को बताता तो रहेगा कि कहां हल दबाना है, कहां हल्का करना है। बैलों को भी उसकी आवाज का सहारा मिल जाएगा। ऍट-बैट चलने पर, बैठे-बैठे, लाठी के इशारे से लाइन पर करता रहेगा। मजबूरी थी, मन नहीं मानता था, इसलिए जाना पड़ता था। नहीं तो, मामूली-सा दाब भी पैर को झनझना देता था। जितना भरोसा था उसे अपनी ताकत और काम करने की क्षमता पर, वह गायब हो गया। पांव से ही नहीं, मन से भी अपाहिज हो गया।

पिछले पंद्रह-बीस दिनों से उसे एक और बेचैनी ने दबोच लिया है। बहुतों के मुंह से सुन चुका है—वासोली के पानसिंह मनराल बीमार हैं। हालत बहुत खराब है। एक पैर में कुछ हो गया है जो हजार दवाइयां करने पर भी ठीक नहीं हो रहा; दिन पर दिन बिगड़ता जा रहा है। लोग बताते हैं—बास आने लगी है पैर से। देखा तो उन्होंने नहीं है, पर लगता है ज्यादा ही गल गया है। पैर को वे दिखाते नहीं हैं। हर समय कपड़े से ढका रहता है। मोहन सिंह की परेशानी का कारण यह है कि इतने दिनों बाद भी वह उनकी खबर लेने नहीं जा सका। खबर लेना इसलिए जरूरी नहीं समझता कि वे इलाके के जाने-माने आदमी हैं। बल्कि उन्हें, वह अपना सहारा मानता आया है। समय-समय पर उन्होंने जो मदद की है, उसकी याद आते ही, उनके दुःख में शामिल न हो पाने की मजबूरी अपने ऊपर खीझ पैदा करने लगी थी।

जबसे उनकी बीमारी के बारे में सुना है, तब से बार-बार उनका ध्यान आ जाता है। थोकदारी को बीते अर्सा गुजर गया, पर पानसिंह अब भी थोकदार है। इसलिए नहीं कि थोक का मालिकाना हक उन्हें आज भी मिला हुआ है। बल्कि, खाते-पीते, मान-सम्मान वाले आदमी हैं, इसलिए। कभी किसी बात की नहीं है। चार बेटे हैं, चारों कमाते हैं। दो फौज में हैं, एक दिल्ली में नौकरी करता है। चौथा, यहीं पास के स्कूल में मास्टर है। खुद गल्ले की दुकान करते हैं। मास्टर में लगा लड़का दुकान में मदद करता है। एक हाई स्कूल है इधर, उसके मैनेजर हैं। सर्वेसर्वा ही हुए। पिछली बार सरपंच भी चुन लिए गए हैं।

मोहन सिंह के दिल में उनके लिए बड़ी इज्जत है। अपने सिर के ऊपर, छाया की तरह मानता है उनको। जब भी मदद के लिए गया, शायद ही नानिकली हो उनके मुंह से। लड़के की फीस माफ करवा दी, वजीफा दिलवा दिया। एक-दो बार, स्कूल से ही कपड़े दिलवाए। गल्ले के लिए कभी नगद पैसे नहीं रहे उसके पास, हमेशा उधार ही लाया उनकी दुकान से। लोग जो भी कहें उसके लिए बुरे नहीं हैं वे।

उसने भी, अपनी ओर से जितना बन पड़ा, उनके घर के काम में कसर नहीं छोड़ी। मौका लगते ही जंगल से बांज का पेड़ काट लाया। नस्यूड़े, दन्याले के घन (हल में लगने वाले लकड़ी के औजार) अपने लिए भी बना लिए और उनके लिए भी। समय

मिला तो दो-चार खेत जोत दिए उनके। बदले में फटा-पुराना कपड़ा मिल गया वहां से। हल्ली-मल्ली लगाकर दो-तीन महीने कट गए। इतना भार यही कम हो गया कंधों पर से।

ऐसे आदमी से बनी रहे, अपने गए-बीते वक्त के लिए जरूरी था। इसीलिए उनकी खबर न ले पाने की बेचैनी बनी हुई थी। एक बार विचार आया, लड़के को भेज दे। फिर सोचा, लड़का तो लड़का ही ठहरा। बच्चा है। क्या बात करेगा, क्या कहेगा और क्या पूछेगा। हमदर्दी और अपनापन भी तो जताना होता है। खाली बैठ कर, तम्बाकू फूंक कर आने वाली बात तो हुई नहीं। घरवाली को भेजने का मन भी हुआ। पर औरत जात, उतने लोगों के बीच में जाएगी कैसे। थोकदारन से भले ही पूछ ले। इससे थोकदार जी के मन से यह बात तो नहीं जाएगी कि दुःख-दर्द में खबर लेने नहीं आया। वैसे हर समय हाथ पसारे रहता है। अपने दुःख की तो मैं ही जानता हूं, पर उनके मन में तो आएगा ही कि अपने खेत-जंगल तक तो जा रहा है, यहां नहीं आ सकता।

चौराहे पर घर होने के कारण, हर आने-जाने वाले से यही सुनने को मिलता था—थोकदार जी की खबर जा रहा हूं। सुनते ही उसका अपराध-बोध जाग जाता था। किसी से, "थोकदार जी कैसे हैं", पूछने की हिम्मत खत्म होती जा रही थी। पूछने से पहले, चोरी पकड़ी जाने का-सा खटका होने लगता था।

इस अपराधबोध से मुक्त होने के लिए, उसने सोच लिया, कल खबर लेने जरूर जाएगा। घंटा-दो घंटा बैठूंगा वहां। शाम ढलने तक न भी लौट सका, तो अंधेरा होने से पहले आ ही जाऊंगा।

घरवाली को बताया तो उसने छूटते ही कह दिया, "बड़ी मुश्किल से तो बाहर-भीतर जाने लायक हुए हो। मील-डेढ़ मील जाने और आने से जरा भी ऐंच आ गई पैर में तो महीनों पड़े रहोगे ऐसे ही। मेरे से मत कहना फिर।"

क्या कहे। पहले जैसी हालत होती तो एक ही झापड़ में झाड़ देता तुनके को। इसे क्या मालूम। इतनी ही समझ होती इनमें, तो आदमी और औरत में फर्क क्यों होता।

दूसरे दिन, सबेरे ही धिंगारू की मजबूत लकड़ी टेकता निकल गया। घरवाली की इच्छा तब भी नहीं थी उसे भेजने की, "सुननी तो तुमने किसी की है नहीं, करनी अपने मन की है। जरा संभल कर चलना। ज्यादा जोर न पड़े पैर पर। जरा भी ऐंच आ गई तो फिर पाक पर आ जाएगा।... बघत से लौट आना। नहीं तो फिकर ही लगी रहेगी।... उतार-चढ़ाव का रास्ता, पैर का है ये हाल..."

"ठीक है, ठीक है", कहता हुआ वह निकल गया। सारा भार ठीक पैर पर लादता हुआ, सूरज के ठीक सिर के ऊपर आने तक पहुंच गया, थोकदार जी के घर।

देखते ही थोकदार जी बोले, "अरे मोहनियां भला तू क्यों चला आया। तेरे पैर में सुना है कुल्हाड़ी से लगी है। अपने पैर का ध्यान रखता। मेहनत-मजदूरी करने वाला आदमी ठहरा। पैर के बगैर तो कुछ हो ही नहीं सकता।"

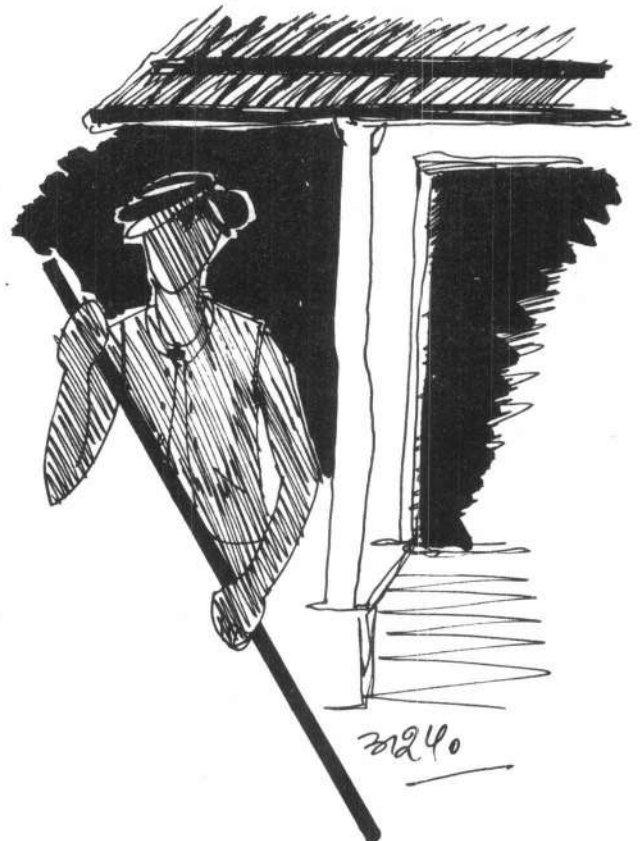
उसको एक चैन मिला, चलो थोकदार जी को कोई शिकायत तो नहीं है। बल्कि उन्होंने उसके पैर की ही चिंता जताई है। बड़े आदमी की बड़ी बात। दस जगह उठने-बैठने वाले हुए। दस तरह

की बातें जानने वाले हुए। हमारे और उनके सोचने में अंतर ठहरा।

उसको राहत महसूस हुई। रास्ते भर घच्च-घच्च चलने से बनी थकान उतर गई।

गद्गद् भाव से जवाब दिया उसने, "दाज्यू, छोटी-मोटी चोट-पटक तो लगती रहती है। अब तो ठीक भी हो गया हूं। आपका हाल सुनता था तो मन को बड़ा दुःख होता था। पैर में दर्द जरा ज्यादा ही हो गया, इस कारण आ नहीं सका। वरना आप तो जानते ही हैं, औकात तो कुछ नहीं ठहरी, प्रेम बड़ा ठहरा आपसे। हमारे बिशन की मां भी रोज पूछती थीं—क्या हाल होगा थोकदार ज्याइजू (जेठ जी) का। आने की समर्थ होती तो बताता उसे।" थोड़ा रुक कर, आंखों में तिर आए पानी को साफ करते हुए पूछा उसने, "अब क्या हाल है आपका। दवा-दारू तो बराबर चल रही होगी। न फायदा हो रहा हो तो किसी लड़के को बुला लेते। उसके साथ चले जाते। एक बार वहां भी दिखा लेते। वहां तो एक से एक डाक्टर ठहरे।"

"अरे अब किसी को बुलाने से क्या होगा, ठीक हो ही जाऊंगा। कम्पाउंडर पट्टी कर जाता है। दवा कुछ दिल्ली से भेज दी थी उदय ने। उससे काफी आराम है। पर तू अपने पैर का हाल बता। यहां भी कुछ खींचतान चल रही है। तू आ गया, अच्छा ही किया। मैं तो किसी को तेरे पास भेजने की सोच ही रहा था। झुगरा-मडुवा तो अपना हरीसिंह बो गया था। तब नजदीक ही था उसका स्कूल। अब बदली हो गई है दूर। मैं ठीक होऊं तो उसे नजदीक लाने की कोशिश करूं। इस समय समस्या ऐसी फंस गई है कि दन्याले के घन बिल्कुल नहीं हैं और मडुबे को दन्याला लगाना भी



हो गया है। नाज से ज्यादा घास-पात उग आई है खेत में। मैं सोच रहा था, तू ठीक होता तो कुछ लकड़ी-वकड़ी काट कर घन भी बना लेता और चार-पांच खेतों में दन्याला भी रगड़ देता। पता नहीं तेरा पैर ठीक होने में कितना समय लगे।

"दाज्यू, दर्द तो काफी है अभी पर भगवान ने चाहा तो हफ्ते-दस दिन में ठीक हो जाएगा।" उसने कुछ सकुचाते हुए कहा। कुछ कहते नहीं बन रहा था। काम करने की सामर्थ्य नहीं थी, ना कहने की हिम्मत नहीं थी। किस मुंह से कहे, "अपनी ही खेती चौपट हुई जा रही है। हमने खुद ही दन्याला लगाने का ख्याल छोड़ दिया है। जितना भी होगा, बिशन की मां हाथ से ही करेगी।"

अनमनाया-सा बैठा रहा वह। चाय पी ली। दो-तीन चिलम तम्बाकू भी फूंक लिया। पर और क्या बात करे, कोई सूत्र ही हाथ नहीं लग रहा था।

थोकदार जी ने जाने क्या सोचा। चिलम एक किनारे खड़ी करके बोले, "अच्छा जरा दिखा तो पैर खोल के। कुछ अंदाज तो लगे, कब तक ठीक हो जाएगा।"

उसे फिर झिझक होने लगी। खोलने को तैयार ही नहीं हुआ, "ना दाज्यू ना, कोई ज्यादा चोट नहीं है। क्यों फिकर कर रहे हो, ठीक हो जाएगा। काम धंधा भी नहीं रुकेगा।"

"अरे खोल के दिखा तो दे, कितना घाव रह गया है, अभी पता तो चले।"

मजबूरी हो गई। खोलना पड़ा। बाहर के कपड़े को खोलने में तो कोई परेशानी नहीं हुई। पर अंदर का कपड़ा लीसे के साथ चिपका पड़ा था। खींच-खींच कर निकालते समय जान निकल गई।

थोकदार जी ने देखा तो भौंचक्के रह गए। एकदम दो फाड़ और दवा के नाम पर लीसा! उस पर भी मील-डेढ़ मील चलकर आया है और वापस भी जाएगा। कह भी रहा है कोई खास बात नहीं है। गजब ही हो गया यह तो। खाना-पीना भी ऐसा ही ठहरा। कभी आधा पेट, तो कभी पूरा पेट। फिर भी इतनी ताकत। यहां के हाल ये हैं कि जरा भी खरोंच पर दुनिया भर का इलाज करवा लिया। दिल्ली से भी दवाइयां मंगवा ली हैं। रोज नहीं तो हफ्ते-दस दिन में एक दो अनार आ जाते हैं। संतरा-मौसमी की तो बात ही क्या करनी ठहरी। फिर भी ठौर से उठना मुश्किल हो गया है। दूसरे-तीसरे दिन पट्टी बदल जाता है कम्पाउंडर। दस-पन्द्रह दिन में बीस-तीस ले भी जाता है। पांच-सात सुइयां भी लग चुकी हैं। फिर भी ठीक होने पर नहीं आ रहा।

मोहन सिंह के चले जाने के बाद भी उनकी समझ में नहीं आया—आखिर कौन से जन्मों के पुण्य हैं इसके साथ जो इतनी चोट पर भी दमादम चल रहा है। इस जन्म के तो हो नहीं सकते। नाती-पोतों के भी बच्चे होने को आ गए, आज तक तो सुना नहीं कि मोहनियां के घर कभी पंडित जी ने धूप-बत्ती जलाकर पाठ किया है। कथा-तीरथ की बात ही क्या करनी ठहरी। आज तक कभी यह भी नहीं सुना कि इसके बाप-दादाओं ने कुछ पुण्य कर्म किया हो।

क्या माया हुई भगवान की।

उनके मन में अजीब-अजीब विचार आते रहे। वाह रे दुनिया वाह रे भगवान! क्या लीला है, क्या इंसाफ है। पुण्य-प्रताप कलयुग में बेकार हो गए सब।

खिन्नता बढ़ती रही। उसके बाद किसी से बात नहीं कर पाए। अपनी बीमारी और इलाज का ही ख्याल आता रहा। डाक्टर-कम्पाउंडर पर भी गुस्सा आया—क्या मरहमपट्टी करते हैं। नकली दवा रखते हैं शायद। इतनी-सी खरोंच का पहाड़ बना दिया। जबकि लोगों के कुल्हाड़ी के घाव अपने आप ठीक हो जाते हैं।

मोहन सिंह का चित भी उस रात ठीक नहीं रहा। कैसा पूंच जैसा फंस गया। इसी टैम थोकदार जी का काम और इसी टैम पैर का बेहाल। सोचता रहा रात भर। जरा भी ठीक हो जाता पैर, तो उनके दो-चार खेत खींच देता। अपना तो बिशन की मां थोड़ा-थोड़ा करके कर ही लेती। दो दिन आगे न होता, तो दो दिन बाद में हो जाता।

पैर काम लायक हो, दो-तीन महीने तक इसके आसार नहीं थे। और आड़े वक्त में काम आने वाले व्यक्ति के काम को मना करने की युक्ति नहीं सूझ रही थी।

इसी सोच में सुबह हो गई।

सबेरे पैर में दर्द ज्यादा था। उठने में तकलीफ हो रही थी। एक मन हुआ पत्नी को आवाज देकर बुला ले। फिर रुक गया—नहीं, उसे कुछ नहीं बताना। बेकार चिड़चिड़ाएगी। समझ से काम तो लेना नहीं उसने, मेरा मन भी खराब होगा।

लाठी का सहारा लेकर बाहर निकलते समय महसूस हुआ, जांघ की जड़ पर गांठ बंध गई है, जो आहिस्ता-आहिस्ता पैर को जकड़ती जा रही थी।

लेकिन उसका ध्यान पैर की बजाय, थोकदार जी से मिलने के बाद उत्पन्न मजबूरी पर ज्यादा था। अपनी असमर्थता से मन पर बना घाव दिल को सिकोड़ता जा रहा था। □

100/2ए, गांवड़ी एक्सटेंशन,
मौजपुर, दिल्ली-110053



महान आदिवासी कवि भीमा भोई

देवेन्द्र कुमार बैसन्तरी

भी मा भोई जन्मजात कवि थे। एक निर्धन एवं अनपढ़ खोंड आदिवासी परिवार में 1846-55 के बीच किसी समय उनका जन्म हुआ था। उपलब्ध सूचना के अनुसार जन्म के पूर्व उनके पिता और जन्म के कुछ ही दिन बाद माता की भी मृत्यु हो गई थी। यही नहीं वे अंधे भी थे, कुछ के अनुसार जन्म से या उसके बाद चेचक से। अपनी क्षुधा पूर्ति के लिए भीमा को भीख तक मांगनी पड़ी थी। दर-दर भटकते हुए उन्हें अपमान सहना पड़ता था और शारीरिक यातनाएं भोगनी पड़ी थीं। उनकी काव्य पुस्तक चौंतीसा मधुचक्र से पता चलता है कि एक बार उन्हें खम्भे में रस्सी से बांध कर पीटा गया था। अपनी स्तुति चिन्तामणि में अपने विषय में वे कहते हैं, "बचपन से ही मुझे दुःख की तीव्रता का एहसास है। एक क्षण के लिए भी मुझे सुख नसीब नहीं हुआ है। मैं जन्म से ही अभागा रहा हूं। मेरे मां-बाप मुझे अकेला छोड़ कर चल बसे थे। यदि सुखी जीवन और अच्छे भोजन की आशा करूं तो वह कहां से मिल सकेंगे।"

इस विषम स्थिति में भी भीमा की काव्य प्रतिभा दबी नहीं बल्कि परवान चढ़ी। वे भूमि-पुत्र तो थे ही। अतः उनके पास ग्रामीण मुहावरों, कहावतों और लोकोक्तियों की कमी नहीं थी। इन्हें और भाषा को मांज कर, निखार कर वे अपनी कविता में पिरोने लगे जिससे उनकी कविता जीवंत बन गई। महिमा धर्म में दीक्षित होने के पूर्व की उनकी कविताएं राधा-कृष्ण के प्रेम पर थीं। आलोचक नेपक के अनुसार चौंतीसा मधुचक्र की अधिकांश कविताएं और चौंतीसा रसर केरल की कविताएं इसी कोटि और काल की हैं।

1862 में भीमा भोई की मुलाकात महिमा धर्म के प्रवर्तक महिमा गोसाईं से हुई। उसी वर्ष सिद्धि प्राप्ति के बाद वे धर्म प्रचार के लिए इधर-उधर घूम रहे थे। गोसाईं जी ने भीमा की संभावनाओं और धर्म के प्रचार-प्रसार में उनके उपयोग को देखते हुए उन्हें अपने धर्म में दीक्षित कर लिया। तब से महिमा गोसाईं की प्रेरणा से भोई महिमा धर्म पर कविताएं बनने लगीं। प्रति-दिन स्नान-पूजा के बाद भीमा हर्षातिरेक की स्थिति में आ जाते थे। उस समय उनके मुख से कविता फूट पड़ती थी। वे एक राग में चार कविताएं बनाते थे। उनके अनुयायियों में कुछ ताड़पत्र पर उनकी बोली हुई कविताओं को लिखते थे। स्तुति चिन्तामणि, भजनमाला और चौंतीसा मधुचक्र उनके प्रमुख कविता संग्रह हैं। अन्य पुस्तकों के नाम हैं—ब्रह्म निरूपण गीता, अष्टक बिहारी गीता, निर्वेद साधना, स्तुति, निषेध गीता, और आदि अंत गीता। उनकी दो रचनाएं—मनु मंडल तथा महिमा विनोद उपलब्ध नहीं हैं। 1971 में प्रकाशित भीमा-भोई ग्रंथमाला में सम्मिलित दो रचनाएं—पद्म कल्प तथा ब्रह्म चालक भीमा की नहीं समझी जातीं। इनकी और भीमा की अन्य पुस्तकों की शैली और दृष्टिकोण में बहुत फर्क है।



माहमा धर्म का एक शून्य ब्रह्म में अटूट विश्वास है। धर्म के अनुसार ब्रह्म निराकार, निरंजन, आलेख्य, अनादि, अनंत और सर्वव्यापी हैं। वही सृष्टि, यही नहीं त्रिदेव-ब्रह्मा, विष्णु, महेश का नियामक है। महिमा धर्म पर बौद्ध धर्म का स्पष्ट प्रभाव है। साथ ही उड़ीसा के मध्य युगीन संतों जैसे सिद्धिचार्य सरहपा, सरलादास (सरला माता के सेवक), बलराम दास तथा इनके अन्य पंच सखा सहयोगियों—जगन्नाथ दास, अच्युतानंद दास, जसवंत दास एवं अनंत दास का भी प्रभाव पड़ा है। यहां यह बताना अप्रासंगिक नहीं होगा कि इनके नामों में आया दास शब्द जाति बोधक नहीं बल्कि इस बात का द्योतक है कि वे अपने को श्री जगन्नाथ जी का सेवक मानते थे।

सरलादास ने अपने महाभारत में एक स्थान पर ब्रह्म को अनाकार ज्योति निरूपित करते हुए कहा है—

अनाहत पुरुष तू
अनाकार ज्योति।

पंच सखाओं में ज्येष्ठ बलराम दास ने तो अपनी विराट गीता में स्वयं जगन्नाथ जी से कहलाया है—"मैं केवल महाशून्य में वास करता हूं। महाशून्य वह क्षेत्र है जो सब नामों से परे है। मैं मूलतः नामहीन हूं। मैं अनाम ब्रह्म हूं।" विराट गीता में ही एक अन्य स्थान पर बलराम दास कहते हैं :

महाशून्यधार शून्य हेला
से शून्य प्रनव जन्मीला
प्रनव अख्यार सम्भूता
जीव परम द्यूनाता।

अर्थात् महाशून्य से शून्य और शून्य से 'ओंकार' उत्पन्न हुआ। 'ओंकार' से अक्षर तथा जीव और परम तत्त्व उत्पन्न हुए। अन्य पंच सखाओं ने भी अपनी रचनाओं में यही बात कही है।

भीमा ने अपनी स्तुति चिन्तामणि के एक स्थान पर ब्रह्मांड की जो कल्पना की है उसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है— "मूर्तिमंत शान्ति से, जो अनाम तथा अलेख है, महाशून्य उत्पन्न हुआ। उसी से अन्तरिक्ष और आकाश उत्पन्न हुए। आकाश से रंग और अनाम से अग्नि, जल और वायु उत्पन्न हुए उसके बाद अनन्त से सूर्य, चन्द्र और त्रिदेव-ब्रह्मा, विष्णु और महेश उत्पन्न हुए। उसके बाद उसी अनाम से सभी जड़ और जंगम पैदा हुए।" स्तुति चिन्तामणि का इससे संबंधित एक दूसरा पद है :

उलटा पालटा नोही, महाशून्या शून्या देही,
मुख बाते जिह्वा कंठे बखानी नोहीं।
सदा जय परमानन्द पेले चरने बंद,
निरन्तर अज्ञं तिनिपुरे उदए।

अर्थात् वह करवट नहीं लेता फिर भी महाशून्य जैसा चलता है। मुख, जिह्वा और कंठ उसका वर्णन नहीं कर सकते। सम्पूर्ण परमानन्द उसी से निःसृत होता है, उसकी जय हो। तीनों जगत का वही संचालन करता है। फिर भी वह कहीं नहीं है।

भीमा भोई की पुस्तकों में स्तुति चिन्तामणि का स्थान सर्वोपरि है। इसमें 100 बोलियां हैं, प्रत्येक बोली में 20 बंद (स्टेंजा) और प्रत्येक बंद में दो पंक्तियां। इस तरह स्तुति चिन्तामणि में 2000 बंद और 4000 पंक्तियां हैं। उड़िया साहित्य में बोली एक विशेष प्रकार की रचना है।

जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं स्तुति चिन्तामणि में भीमा के जीवन संबंधी बहुत-सी सामग्री है। इसके अतिरिक्त पुस्तक में शुरू से अंत तक मानव और समाज को ऊपर उठाने की उत्कट इच्छा दिखती है। कलयुग के प्रभाव से मनुष्यों का नैतिक पतन हुआ है। चरित्र में गिरावट आ गई है। अत्याचार, द्वेष, मोह, ममता, मद और लालच का बोल-बाला हो गया है। भीमा इसके लिए मनुष्यों को तो बुरा-भला कहते ही हैं परमात्मा को भी नहीं बखशाते। वे परम-ब्रह्म से कहते हैं कि पाप, पुण्य, आजादी, गुलामी सभी आप की ही देन है। आप बुराइयों का निवारण कर संसार को ठीक ढंग से क्यों नहीं चलाते। उनकी राय है कि महिमा धर्म को स्वीकार कर समाज और व्यक्ति व्याधियों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

भीमा की भजनमाला में 310 भजन हैं। विद्वानों की राय है कि भोई द्वारा लिखित भजनों की संख्या अवश्य ही अधिक होगी पर किसी कारण अब मिल नहीं रहे हैं। उनके भजनों में सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार के भजन हैं। इनके भजनों में अलंकार और कृत्रिमता का अभाव है। यद्यपि उनके शब्द और संरचना सरल है पर वे भाव प्रवण और मर्मस्पर्शी हैं। स्तुति चिन्तामणि की बोलियों का जो उद्देश्य है वही भजनों का भी है। चौंतीसा मधुचक्र उड़िया साहित्य की एक जानी-मानी काव्य रचना है। उड़िया वर्णमाला के चौंतीसों अक्षरों पर कविता बनाई जाती है—आमतौर पर ऊपर से आरंभ करके नीचे तक। पर भीमा भोई ने चौंतीसा की रचना के लिए दुष्कर मार्ग अपनाया है—नीचे से

ऊपर। श्री बी. सी. मजूमदार ने भीमा की चौंतीसा की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

अपनी ब्रह्म निरूपण गीता में भीमा ने ब्रह्म की प्रकृति और विशेषता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि वह साकार भी है और निराकार भी। वह योगी और भोगी भी है। वह प्रकाश भी है और अंधकार भी है तथा गुरु भी है और शिष्य भी। भीमा ने ब्रह्म में इसी प्रकार अन्य विपरीत गुण आरोपित कर उसे नए रूप में प्रदर्शित किया है। भीमा ने आगे बताया है कि ब्रह्म तर्क, विद्वता और ज्ञान से प्राप्त नहीं किया जा सकता। उसे पाने के लिए चाहिए वैसी ही चाह और विश्वास जो बच्चों में मां के लिए होती है। अष्टक बिहारी गीता में भीमा ने मनुष्यों, विशेषकर भक्तों का आह्वान किया है कि वे सात्विक और संयमित जीवन व्यतीत करें और अपने को पूर्णतया ब्रह्म को समर्पित कर दें। समाज की बढ़ती अधोगति और मूल्यों में गिरावट से उन्हें मार्मिक कष्ट होता है। वे सलाह देते पाए जाते हैं कि लोग महिमा धर्म के मार्ग का अनुसरण करें। पर ब्रह्म जो प्रत्येक वस्तु और व्यक्ति में विद्यमान है उनकी जीवन नौका को पार लगाएगा। निर्वेद साधना महिमा धर्म पर एक महत्वपूर्ण रचना है। इसमें सवाल जवाब के माध्यम से धर्म के संस्थापक महिमा गोसाईं ने धर्म के अन्यतम व्यवस्थापक और संगठक विश्वनाथ बाबा की शंकाओं तथा कठिनाइयों का निराकरण और धर्म के सारतत्वों का उद्घाटन किया है। इसमें कहा गया है कि बाह्य आडम्बरों-तिलक, चन्दन का लेप, जनेऊ एवं तुलसी की माला धारण करने का विशेष महत्व नहीं। वैदिक कर्मकांड भी आवश्यक नहीं। ब्रह्म की प्राप्ति के लिए सच्ची निष्ठा, भक्ति और साधना जरूरी है। श्रुति निषेध गीता भी निर्वेद साधना जैसी रचना है। इसमें अनादि ब्रह्म ने विश्वनाथ बाबा को बताया है क्यों महिमा धर्म त्रिदेव ही नहीं 33 करोड़ देवी-देवताओं, असंख्य योगिनियों, तारों और ग्रहों की उपेक्षा करता है। इसमें बताया गया है कि मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रभु के चरणों में पूर्ण आत्म-समर्पण ही एकमात्र मार्ग है। आदि-अंत गीता एक तकनीकी प्रबंध है। इसमें प्रतीकों के माध्यम से शरीर के मुख्य अंगों-दश दरवाजों, सात-द्वीपों, नौ रत्नों, दस सिद्धियों और दस अवतारों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। इसमें आत्मा को स्त्री और परमात्मा को पुरुष के रूप में दर्शाया गया है। इसमें आगे कहा गया है कि मोक्ष प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को परम ब्रह्म के समक्ष उसी प्रकार आत्मसमर्पण कर देना चाहिए जिस प्रकार एक सेवा-निष्ठ पत्नी अपने पति के प्रति करती है।

महिमा स्वामी की मृत्यु के बाद भोई भीमा बोलनगीर जिले के खलियापाली नामक स्थान पर, जो आंग नदी के तट पर बसा है, आकर बस गए। वहीं सोनपुर के महाराजा की अनुमति से एक आश्रम की स्थापना हुई। उनकी अध्यात्मिक पत्नी मां अन्नपूर्णा की देख-रेख, में संचालित वह आश्रम 1877 के बाद महिमा धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया। वही 1894 में भीमा भोई का देहावसान हुआ। उन्हें 1892 में एक पुत्र और एक पुत्री हुए थे जिनकी मृत्यु 1935-36 में हुई थी। उनकी महिला सहकर्मियों की मृत्यु इस सदी के प्रथम क्वार्टर में हुई थी। आश्रम में ही सभी की समाधियां बनी हैं।

1923 में बी. सी. मजूमदार ने उड़िया काव्य का एक प्रतिनिधि संग्रह प्रकाशित किया था जिसमें भीमा भोई की कुछ कविताओं को स्थान दिया था। उसके पहले भीमा की एक भी रचना प्रकाशित नहीं हुई थी। श्री मजूमदार ने अपनी भूमिका में उन्हें विलक्षण प्रतिभा का व्यक्ति बताया है। उन्होंने सखेद कहा था कि हमने भीमा की बहुत उपेक्षा की है जबकि उस पर हमें गर्व करना चाहिए। डा. मायाधर मानसिंह ने अपनी 'हिस्ट्री आफ उड़िया लिटरेचर' में भीमा को भारतीय साहित्य का एक असाधारण रचनाकार निरूपित किया है। श्री सीताकान्त महापात्र ने साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित भीमा पर लिखी अपनी पुस्तक में उन्हें अन्यतम गीतकार कहा है। ऐसे विद्वानों की कमी नहीं जो भीमा की तुलना रामकृष्ण परमहंस तथा सरला दास से करते हैं। प्रो. आर्तबल्लभ मोहनती ने भीमा की जनता के लिए वेदना सहने की तुलना जीसस क्राइस्ट से की है। जब एक बार साहित्य अकादमी ने 14 भारतीय भाषाओं में से प्रत्येक से उसकी आत्मा की परिचायक दो-दो पंक्तियां मांगीं तो सभी उड़िया साहित्यकारों ने

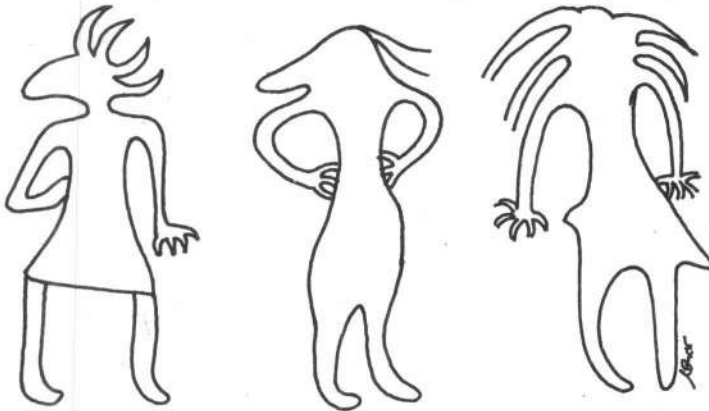
एक राय से भीमा की स्तुति चिन्तामणि की 27वीं बोली की दो पंक्तियां भेजी थीं। इन पंक्तियों का भावार्थ है कि जगत के उद्धार के लिए यदि मुझे नर्क में रहना पड़े तो वह भी मुझे कबूल है। भीमा की अब तक सभी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी रचनाओं के दो सम्पूर्ण संग्रह भी छपे हैं—एक 1971 में और दूसरा 1972 में। कई पुस्तकें लिखी गईं। जिनमें भीमा भोई और महिमा धर्म पर प्रकाश डाला गया है। कुछ स्मारिकाएं छपी हैं और कुछ गोष्ठियां आयोजित हुई हैं। उनके भजनों के कई डिस्क भी बने हैं।

आज भी भीमा के भजन ग्रामीण क्षेत्रों, कम से कम आदिवासी इलाकों में, तम्बूरे और अन्य वाद्ययंत्रों के साथ गाए जाते हैं। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि यदि महिमा धर्म उड़ीसा के अलावा अन्य राज्यों में फैल चुका है तो उसका सर्वाधिक श्रेय भीमा भोई को ही है। □

ई/13-ए डी. डी. ए. प्लेट्स मुनीरक, नई दिल्ली

(पृष्ठ 28 का शेष)

लाल रंग से बने हुए हैं तथा पानी से गीला करने पर उनका रंग व आकार बिल्कुल स्पष्ट हो उठता है। कुछ चित्रों में पीले, काले व सफेद रंगों का भी प्रयोग हुआ है परन्तु इनकी संख्या नगण्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में लाल गेरुआ रंग सरलता से उपलब्ध हो जाता था जिसे वनस्पतिक रंगों, खनिजों व पशु रक्त आदि के सम्मिश्रण से स्थायी रूप दिया जाता था। चित्र निर्माण का कार्य बांस की डीड़ियों व अंगुलियों से किया जाता था। आज भी आदिवासी लोकांकनों में चित्र स्वरूप इसी ढंग से बनाए जाते हैं।



शोध तथा विश्लेषण के आधार पर विन्ध्य के इन शैल चित्रों का रचना काल 3000 वर्ष से 7000 वर्ष पूर्व का माना गया है। कुछ चित्रों के नीचे पुराने धूमिल चित्रों की रेखाएं भी दिखाई देती हैं जो विभिन्न रचनाकालों की ओर संकेत करती हैं। कुछ चित्र प्राकृतिक आपदाओं का शिकार होकर भी अस्पष्ट हो गए हैं। परन्तु इनकी सहजता, स्वाभाविकता व लयात्मक गतिशीलता आदिमानव के आत्मिक उल्लास के रूप में शैलाश्रयों पर यूं जीवन्त है मानो हजारों वर्ष पूर्व की नृत्य मग्न आकृतियां किसी जादूगर के सम्मोहक इशारे पर ज्यों की त्यों स्थिर कर दी गई हों। □

आकाश कालीन्स,
रुखड़घाट, मिर्जापुर उ. प्र. 231001

गीत क्या लिखें

डॉ. श्रीराम परिहार

गीत क्या लिखें
शब्दों के अर्थ खो गए।

अनगढ़
पत्थरों की
सुगबुगाती मूरतें,
ठहरी
नदी में धोती
खुरदरी सूरतें,
उजले घाटों पर
मौसम कालिख धो गए।
हवाओं
की बात पर
आखिर कब तक जिएं
पांच पुड़ों
वाली गुदड़ी
कहां-कहां सिएं
तपते खेतों में
मुरझाए बीज बो गए।
एक चिथड़ा
सुख खातिर
पतझड़ भर झड़ना,
जड़ों का
गीलापन
पेड़-पेड़ लड़ना
रेत के कैकटस
बाग के गुलाब हो गए। □

कुण्डेश्वर वार्ड, खंडवा, (मध्य प्रदेश)

जौनसार—बावर का सांस्कृतिक मेला 'बिस्सू'

डॉ. प्रहलाद सिंह रावत

मेले और उत्सव किसी क्षेत्र में रहने वाली जाति विशेष की संस्कृति के अभिन्न अंग होते हैं, जो उसे संस्कृति के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं। समस्त हिमालय में पूर्व से पश्चिम तक विभिन्न जनजातीय समूह निवास करते हैं, जो आज के बदलते परिवेश में भी अपनी प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं को सुरक्षित रखे हुए हैं।

मध्य हिमालय के अन्तर्गत गढ़वाल तथा हिमाचल प्रदेश में तोलछा, मारछा, जाड वर्ग के भोटिया, जौनसारी, किन्नौर, लाहोली तथा गुर्जर जनजातियां निवास करती हैं। जौनसारी जनजाति देहरादून जनपद के उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र तहसील चकराता में रहती हैं। यह क्षेत्र जौनसार तथा बावर दो भागों में विभाजित है। यद्यपि भौगोलिक दृष्टि से यह क्षेत्र गढ़वाल मण्डल के अन्तर्गत है किन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से हिमाचल प्रदेश के निकट है। यहां के राति-रिवाजों तथा सामाजिक संस्कारों में हिमाचली समाज का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। जौनसारी जनजाति बाह्य समाज में खस या खसिया नाम से विख्यात है। जो प्राचीन वाडमय में वर्णित खस जाति की परम्पराओं को आज भी सुरक्षित रखे हुए है। खस जाति आर्यों का ही पूर्ववर्ती कबीला था, जो 2000 ई. पू. के आस-पास मध्य एशिया के यारकन्द, खोतान, कश्गर, कश्मीर होकर गढ़वाल-कुमाऊं तक विचरणशील था। हिमाचल प्रदेश तथा गढ़वाल-कुमाऊं की जनसंख्या में आज भी खस जाति का बाहुल्य है। जौनसार—बावर का राजपूत समाज आज भी अपने को खसिया कहने में गौरव अनुभव करता है।

प्रस्तुत लेख में 81,105 (1981) आबादी वाले जौनसार—बावर क्षेत्र में मनाए जाने वाले 'बिस्सू' मेले का वर्णन है जो रवाई-जौनपुर से लेकर हिमाचल प्रदेश तक के किन्नौर, लाहौल-स्पीति, चम्बा, शिमला, सिरमौर तक के विस्तृत क्षेत्र में बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है।

मेले की तैयारियां तथा आयोजन

बिस्सू मेले की तैयारियां एक सप्ताह पूर्व ही शुरू हो जाती हैं, जिसमें घर गलियों की सफाई, शराब बनाना, त्योंहार के लिए शाकुली (पप्पड़ी) बनाना, थोडा नृत्य हेतु धणुकाण्ड (धनुष बाण) तैयार करना तथा मेले के अवसर पर घरों में फूलों की मालाओं हेतु, रस्सियों के लिए बाबड़-घास एकत्र करना आदि प्रमुख हैं।

यह मेला वैशाखी से शुरू होता है तथा लगातार दो-तीन दिन तक प्रत्येक गांव के आंगन में मनाया जाता है। वैशाखी के दिन



जौनसारी युवती

लोग प्रातःकाल उठकर गांव की 'थात' अथवा मन्दिर के आंगन में बाबड़ घास की रस्सियां बनाते हैं तत्पश्चात इन रस्सियों पर बुरांस के फूल लगाकर इनको मालाओं का रूप दिया जाता है। प्रत्येक परिवार के लोग एक-एक माला देवता को अर्पित करते हैं। शेष मालाएं घर के चारों ओर लगाई जाती हैं। इन मालाओं से घर आकर्षक रूप से सज जाता है और इसकी तिबारियां चारों ओर से लाल दिखाई देती हैं। तत्पश्चात गांव के सारे लोग एक साथ खेतों में जाते हैं और वहां स्थापित पितृ देवताओं को पूरी-पकोड़े, पप्पड़ी तथा फूल-मालाएं चढ़ाते हैं। सुबह के भोजन के पश्चात प्रायः लोग रिंगाल की कण्डियों में पूरी-पकोड़े लेकर अपने घर की विवाहित लड़कियों के ससुराल जाते हैं और यथा संभव दोपहर तक उन्हें साथ लेकर घर लौटते हैं।

घर लौटने के पश्चात लोग पुनः देव मंदिर के आंगन में एकत्रित होते हैं। प्रातःकाल जो रस्सियां मंदिर अथवा 'थात' में छोड़ी जाती हैं, उन्हें गांठकर मंदिर से लेकर रास्ते में पड़ने वाले मकानों के ऊपर से लाकर गांव के बाहर छोड़ दिया जाता है। जिस स्थान पर यह रस्सी छोड़ी जाती है वहां पर पूरी तथा पप्पड़ी चढ़ाई जाती है। इसके बाद सभी लोग तेजी के साथ दौड़कर गोगा गिराने चले जाते हैं।

गोगा पत्थरों से चिना हुआ एक गोल चबूतरा होता है, जिसकी गोलाई छः फुट तथा ऊंचाई तीन फुट होती है। इसे उसी दिन दोपहर के समय गांव के युवक तैयार करते हैं। गोगा को चारों ओर से फूलों से सजाया जाता है। इसे किसी ऊंचे स्थान पर चिना जाता है जिसके नीचे की ओर ढलान होता है। गोगा को गिराने का विशिष्ट नियम यह है कि इसे चारों ओर से राजपूत जाति के लोग घेर लेते हैं तथा नीचे की ओर से अनुसूचित वर्ग के लोग आक्रमण करके इसे छूने का हर संभव प्रयास करते हैं। बहुत देर तक दोनों पक्षों में धक्का-मुक्की चलती है। दूर खड़े दर्शकगण मंह पर थाप मारकर हर्षोल्लास में शोरगुल करते हैं। एक बाजगी निरन्तर ढोल बजाता रहता है। जैसे ही कोई व्यक्ति इसे छू लेने में सफल हो जाता है, गोगा गिरा दिया जाता है। गोगा गिराने के बाद लोग लम्बी पंक्ति बनाकर नृत्य गान करते हुए आंगन में पहुंचते हैं। जहां स्त्री-पुरुष दोनों मिलकर समूह नृत्य करते हैं। इसके पश्चात् 'थोडा' नृत्य किया जाता है।

दूसरे-तीसरे दिन भी यह मेला गांव भर में हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। स्त्री-पुरुष सामूहिक रूप से नृत्यगान करते हैं तथा इस अवसर पर विशिष्ट नृत्य 'थोडा' खेला जाता है।

चौथे दिन का मेला समस्त क्षेत्र के किसी ऊंचाई वाले स्थान पर लगता है, जहां युवक-युवतियां तथा वृद्ध पुरुष-स्त्रियां ढोल बाजे के साथ बड़ी संख्या में एकत्र होते हैं। ऐसे स्थलों में ठाणी डान्डा, चल डान्डा, गिठिया, गांगणी-टीर, बौगधार, कोटी, कनासर तथा जाखणी प्रमुख हैं। क्षेत्र के समस्त लोगों के एकत्र होने के पश्चात् किसी ठाकुर द्वारा मेले का उद्घाटन होता है तत्पश्चात् 'थोडा' नृत्य और समूह गान किया जाता है।

थोडा नृत्य

बिस्सू मेले का प्रमुख आकर्षण 'थोडा' नृत्य है। यह नृत्य धनु-काण्ड (धनुष-बाण) तथा डांगरा (कुल्हाड़ीनुमा हथियार) के साथ किया जाता है। 'थोडा' का आशय धनुष-तीर से लिया जाता है। स्थानीय लोगों का विश्वास है कि यह खेल महाभारत

काल से निरन्तर चला आ रहा है, जो आज भी पाण्डव बनाम कौरव दो प्रतिद्वन्द्वी पक्षों के बीच खेला जाता है। इन्हें स्थानीय बोली में क्रमशः 'पांसी' तथा 'साठी' कहा जाता है। 'पांसी' का आशय पाण्डव प्रजा तथा 'साठी' का कौरव प्रजा है। जौनसार-बावर में पूजित महासू देवता की प्रजा आज भी 'साठी' अथवा 'पांसी' दो वर्गों में विभाजित है। टोंस के दाएं तट के लोग 'साठी' तथा बाएं तट के लोग 'पांसी' नाम से जाने जाते हैं।

'थोडा' नर्तक खूंद कहलाते हैं, खूंद का आशय मोड़-भड़ अथवा बहादुर व्यक्ति से लिया जाता है। खूंद मध्यकाल में राजा ठाकुरों के सैनिक अंग रक्षक होते थे। देव मंदिर अथवा देवयात्रा में देवता की सुरक्षा का भार इन लोगों पर होता था। जौनसार-बावर में आज भी छज्जाड़, डांगुठा, चौसाल तथा लखऊ आदि खूंदों के गांव हैं, जो अब अपने को राणा, चौहान कहने लगे हैं।

इन नर्तकों की वेष-भूषा लम्बा कोट, चूड़ीदार पजामा और सिर पर मोर पंख लगी पगड़ी होती है। पैरों को नीचे घुटनों तक निवार की पट्टियों से बांधा जाता है ताकि नृत्य करते समय पैरों को बाण न बंध पाए।

नृत्य करने के लिए प्रतिद्वन्द्वी को आमंत्रित किया जाता है। कहीं-कहीं तो यह निमंत्रण विशेष संकेतों में दिया जाता है। त्यूणी के निकट खत देवघर में बिस्सू मेला पूरे वैशाख महीना चलता है। उसी दौरान प्रतिद्वन्द्वी खिलाड़ी को निमंत्रण देने के लिए उसके मकान की सीढ़ी का पत्थर गिरा दिया जाता है। जिसका आशय कोई व्यक्ति स्वतः समझ जाता है कि यह 'थोडा' खेल हेतु निमंत्रण है। सामान्यतः नियत स्थान पर भी किसी व्यक्ति को ललकार कर नृत्य हेतु आमंत्रित किया जाता है।

नृत्य अथवा खेल

इस खेल में दो-दो खिलाड़ियों की जोड़ियां अलग-अलग नृत्य करती हैं। एक खिलाड़ी के हाथ में धनुष-बाण तथा दूसरे के हाथ में डांगरा रहता है। नृत्य इष्ट देवता की छत्रछाया अथवा कृपा

(शेष पृष्ठ 48 पर)



राष्ट्रीय नाटककार चिरंजीत

राष्ट्रीय नाटककार चिरंजीत; संपादक: आचार्य क्षेमचंद्र सुमन;
प्रकाशक: पुस्तकायन, 2/4240 ए, अंसारी रोड, नई
दिल्ली-2; मूल्य: 50 रुपये।

श्री चिरंजीत रेडियो और रंगमंच दोनों ही क्षेत्रों के प्रसिद्ध नाटककार हैं। लेखन का आरंभ कविता से किया था किन्तु प्रस्तुत पुस्तक की समीक्षा में उनके इस पक्ष का विवेचन विषयांतर हो जाएगा। चिरंजीत की लेखनी विशेष उद्देश्य को सामने रखकर अग्रसर होती रही है। यह राष्ट्रीय सोद्देश्यता उनके सभी नाटकों में प्रतिफलित हुई है और उनकी प्रतिभा और कला-कौशल के योग से संदेश को प्रभावी बनाती रही है।

प्रस्तुत पुस्तक अनेक जाने माने समीक्षकों, साहित्यकारों और व्यंग्य लेखकों के चिरंजीत की नाट्यकृतियों, उनके नाटककार के रूप में विकास पर विचार और समीक्षाओं का संकलन है। इसकी भूमिका में 'सुमन' जी ने चिरंजीत को उनकी व्यंग्य-प्रधान और गंभीर, दो प्रकार की नाट्य रचनाओं के लिए भारतेन्दु हरिश्चंद्र की परंपरा का प्रतिनिधि और उन्नायक माना है। सुप्रसिद्ध नाट्य-समालोचक—डा. दशरथ ओझा ने पाश्चात्य और भारतीय नाट्य चेतना की आधारभूत भिन्नताओं के, एक सम्मेलन में चिरंजीत द्वारा किए गए विश्लेषण का समर्थन करते हुए 'रतजगा' को हिन्दी की श्रेष्ठ नाट्यकृति माना है। उसमें गांधीवादी और भोगवादी दर्शनों के अनुयायियों की सामाजिक और व्यक्तिगत परिणतियों का सजीव चित्रण और स्पष्ट संदेश मार्मिकता से उभारा गया है।

डा. हुकुम चंद राजपाल ने 'रतजगा' को राष्ट्रीय मूल्यों की सशक्त नाट्यकृति बताते हुए उसमें शिल्प की प्रौढ़ता की ओर हमारी दृष्टि आकर्षित की है। सुप्रसिद्ध समालोचक डा. विजयेन्द्र स्नातक ने 'दादी मां' शीर्षक नाटक पर अपनी राय व्यक्त करते हुए लिखा है कि इस कृति में युग-परिवर्तन की एक यथार्थ झांकी के साथ प्रगति और परंपरा का द्वंद्वात्मक संघर्ष प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। उनके विचार से यह नाटक स्वतंत्र भारत की नव्य चेतना का संदेशवाहक है।

डा. सुधेश ने हिन्दी में श्रेष्ठ और कलात्मक हास्य व्यंग्य के अभाव की ओर संकेत करते हुए 'घेराव' नाटक की शक्ति सामाजिक समस्या और उसकी व्यंग्यात्मकता में पाई है। डा. बरसाने लाल चतुर्वेदी ने चिरंजीत के 'हास्य मंच' और जाने-माने व्यंग्य-कवि डा. शेरजंग गर्ग ने उनकी विपुल परिमाण में रचित और रेडियो से प्रसारित झलकियों पर समीक्षात्मक नजर डाली है। वरिष्ठ साहित्यकार विष्णु प्रभाकर और स्वर्गीय जगदीश चंद्र माथुर ने उन्हें समसामयिक विषयों पर स्वस्थ और स्वाभाविक और सुरुचिपूर्ण हास्य व्यंग्य लिखने में सिद्धहस्त माना है।

द्वितीय खंड में 'समग्र कृतित्व' के अंतर्गत डा. मान्धाता ओझा, डा. सिद्धनाथ कुमार, डा. हरीश नवल और अन्य कई लेखकों के विवेचन हैं। इन्होंने चिरंजीत के लम्बे लेखन काल पर सर्वेक्षणपरक दृष्टि डालते हुए उनकी ध्वनि और मंच संबंधी कृतियों की विशिष्टताओं का उल्लेख किया है। □

डा. गोपाल शर्मा
सी 8 सी, एम आई जी, मायापुरी,
नई दिल्ली-110064

कृष्ण पक्ष की मधुमक्खियां

कृष्ण पक्ष की मधुमक्खियां (उपन्यास); लेखक: रवि मिश्रा;
संस्करण: 1985; प्रकाशक: विद्या प्रकाशन मंदिर, 1681,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002; पृष्ठ संख्या: 220; मूल्य: 35
रुपये।

उपन्यास लेखक स्वर्गीय रवि मिश्रा महाराष्ट्र काडर के आई.ए.एस. अधिकारी थे। अपनी प्रशासनिक सेवा के दौरान उन्होंने ग्रामीण अंचल के निवासियों की अनेक कठिनाइयों का निकट से अनुभव किया था। वास्तव में इस उपन्यास की पृष्ठभूमि भी इसी भावना को आत्मसात किए हुए है कि प्रशासनिक अधिकारी को जनता का शुभचिंतक क्षेत्र होना चाहिए, उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाला नहीं। प्रस्तुत कृति का शीर्षक 'कृष्ण पक्ष की मधुमक्खियां' मधुमक्खियों के जीवन से जुड़े होने पर भी संकेतात्मक है। उपन्यास का ताना-बाना इसी शीर्षक के इर्द-गिर्द बुना गया है। कृष्ण पक्ष की मधुमक्खियां शहद एकत्र करती हैं और फूलों का रस लेते समय आपस में लड़ती-झगड़ती भी हैं किन्तु सबका उद्देश्य एक ही छत्ते के निर्माण का होता है। परन्तु विडंबना यह है कि जिस छत्ते को वे इतने परिश्रम से निर्मित करती हैं उसे शुक्ल पक्ष के प्रारंभ होते ही शहद निकालने वाला निकाल ले जाता है, बेचारी मधुमक्खियां अपने परिश्रम का फल भी नहीं चख पातीं। लेखक उपन्यास के माध्यम से इस पूरे प्रकरण के प्रति अपने विचार प्रकट करता हुआ कहता है कि "अपने परिश्रम का फल न पाने के पूर्वाभास का यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि हम परिश्रम ही न करें और हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें।" वह आगे स्पष्ट करता हुआ कहता है—"छत्ता चला जाए, शहद भी चला जाए, फूल और मधुमक्खियां फिर भी रहती हैं।" लेखक का अभिप्रेत है कि कार्य रुकता नहीं आगे बढ़ता रहता है। यह एक चक्र है जो चलता रहता है।

उपन्यास का केन्द्र बिन्दु नासिक जनपद स्थित एक गांव टाकली बुद्रुक है। हर वर्ष रेवती नदी की बाढ़ से यहां भीषण तबाही होती है। सरकार गांव वालों की सुविधा के लिए यहां बांध बनाना चाहती है ताकि ग्रामीणों को इस विनाश से मुक्ति मिले। इसके लिए गांव को अन्यत्र हटाना आवश्यक है किन्तु इस कार्य में स्थानीय ग्रामीण राजनीति आड़े हाथों आती है। हरिजन और सवर्ण मराठों की आपसी रंजिश भी खुलकर सामने आती है।

मराओं का हरिजनों पर अत्याचार जिलाधिकारी किसी भी प्रकार बर्दाश्त नहीं कर पाते और नए स्थान सुपे गावठान पर उनकी देवी मरीआदि के देउल को बनाने का सख्ती से आदेश देते हैं। अंततः अनेक कठिनाइयों के पश्चात लोग नए गावठान में जाने को उद्यत हो जाते हैं और जिलाधिकारी आदि संतोष की सांस लेते हैं तथा सरकार की एक ग्रामीण योजना सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाती है।

लेखक ने उपन्यास में अनेक बातों का चित्रण कर एक विशेष अंचल के निवासियों के रीति-रिवाजों तथा उनकी भावनाओं का अत्यंत प्रभावशाली वर्णन किया है। शुभ कार्य के समय होने वाले कार्यों का आरंभ में ही बड़ा मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यास की भाषा सामान्य बोलचाल की भाषा है। इसके माध्यम से लेखक वातावरण निर्माण के लिए भी सचेष्ट दिखाई देता है। जहां भी ग्रामीण वातावरण को वास्तविकता प्रदान करने की आवश्यकता हुई है उपन्यासकार ने मराठी के शब्दों का प्रयोग कर स्वाभाविकता का निर्वाह किया है। मराठी के कुछ शब्द हैं—खन, पिशवी, वामको, उपोषण, वाटप, नवरा, सोय, मोड़ा, विहिरी, खड़क आदि। कहीं-कहीं मराठी के पूरे वाक्य का प्रयोग दिखाई देता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उपन्यास पठनीय है और इसे पढ़ कर हमें पिछड़े हुए भारतीय अंचलों के बारे में अनेक तथ्य विदित होते हैं। उपन्यासकार का प्रयास सराहनीय है तथा हम यह बात पूर्ण विश्वास के साथ कह सकते हैं कि यदि मृत्यु ने उसे असमय ही हमसे छीन न लिया होता तो वह अनेक ग्रंथों की रचना कर हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में अवश्य ही योग देता। □

राग खामोशी

राग खामोशी (कविता संग्रह); कवि: रवि मिश्रा;
प्रकाशक: विद्या प्रकाशन मंदिर, 1681, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002; मूल्य: 15 रुपये।

प्रस्तुत संग्रह में स्वर्गीय रवि मिश्रा द्वारा रचित कविताओं को संग्रहीत किया गया है। लेखक पर बचपन से ही गांव के वातावरण का प्रभाव पड़ा जो उनकी कविताओं में परिलक्षित होता है। राग खामोशी में तीन उपशीर्षकों के अंतर्गत कवि की कविताओं को संजोया गया है। 'गजलें, नज्में और गीत', 'मुक्तक' तथा 'धुनबद्ध कविताएं'। प्रथम उपशीर्षक के अंतर्गत ग्यारह कविताएं संग्रहीत हैं—फैसला कर लें, पानी बरसे है, यादें मसूरी की, ये पिछली रात, अब के मिले, कभी-कभी, बहाना है, कुछ ठिठके क्षण, आज महफिल में हैं, रंग फीका है, दर्द बढ़ता है। द्वितीय उपशीर्षक के अंतर्गत ये आठ कविताएं हैं—छोटी कविताएं, एक समझौता, परछाइयां, क्षमाशीलता, शादी के दसवें साल, दो बोध: एक किशोरी के, रामजी इतना तो दो तथा शास्त्रीय धुनों पर कुछ कविताएं। तृतीय उपशीर्षक के अंतर्गत तीन अंश हैं—प्रचलित धुनों में कुछ लोक गीत, कुछ नज्में और गजलें तथा रागखामोशी।

संग्रह की कविताओं पर दृष्टिपात करने पर अनेक ऐसी बातें हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं जिन्हें हम प्रतिदिन के जीवन में नजरअंदाज कर जाते हैं। प्रेम और खुशियों की घड़ियां सबके जीवन में आती हैं किन्तु जो उन्हें संजो लेते हैं वे ही आनन्द प्राप्त करते हैं।

"दिवस अनुराग के खुशबू की तरह आते हैं।
संजो सके न अगर यूं ही निकल जाते हैं।"

(पृष्ठ 15)

कवि इस तथ्य को भी स्वीकार करता है कि अनेक भटकनों तथा संघर्ष के बाद ही थोड़ी सफलता मिलती है—

"भटक फिरा हूं घुप्प अंधेरों में अकेला उम्र भर,
तब जाके थोड़ी चांदनी हाथ आ गई है कभी-कभी।"

(पृष्ठ-20)

कविताओं के माध्यम से कवि ने शहीदों की समस्याओं पर भी संकेत किया है। शहीदों के परिवार को यदि पूर्ण संरक्षण नहीं दिया जाता तो यह उनकी भावनाओं का अनादर होता है। कवि के हृदय में नारी के प्रति सम्मान का भाव भी दिखाई देता है। वह ओझा या झाड़ू-फूंक करने वालों के नारी संबंधी दृष्टिकोण से दुखी दिखाई देता है जब वे नारी को निर्वस्त्र कर भूत या चुड़ैल उतारने का अभिनय करते हैं और अपनी दमित वासनाओं की पूर्ति करते हैं। (पृष्ठ-76)

कविताओं की भाषा सामान्य तथा सरल है। गजलों आदि में उर्दू के शब्दों का प्रयोग अतीव स्वाभाविकता के साथ हुआ है। भाषा शैली की सबसे बड़ी विशेषता है उसमें विद्यमान आलंकारिकता। इसी के कारण कविताओं के रसास्वादन में आनंद की अनुभूति होने लगती है। एक उदाहरण देखिए:

"शाम आती है खबरदार कंवारी की तरह,
झीने परदों को डालकर जो रूप सजती हो।
सुर्मई रंग से छनता है बदन सिंदूरी,
दूर बस्ती में जैसे बांसुरी-सी बजती हो।"

(पृष्ठ 62)

कवि ने काव्यगत कुछ नए प्रयोग भी किए हैं। आलंकारिकता और नए प्रयोगों के माध्यम से कविता में एक विशेष आकर्षण उत्पन्न हो गया है:

"जाम के रंग के से लाल और उसके तले,
दरिआए आब में सैलाब-सा ठिठका सीना।
टूटती चूड़ियों की तरह की थी उसकी हंसी,
पुतलियां जैसे मेरे जव्वत का हों आईना।"

(पृष्ठ-65)

संग्रह की कविताओं से हमारा ज्ञानवर्द्धन तो होता ही है साथ ही साथ हम काव्य-रस का भी आनन्द प्राप्त करते हैं। □

डा. अनिल कुमार उपाध्याय
2, राम किशोर मार्ग
सिविल लाईन्स, दिल्ली-110054

गवाह

गवाह; श्रीमती कमल कुमार; प्रकाशक: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नई दिल्ली-110002; पृष्ठ संख्या: 132; मूल्य: 60 रुपये।

डा. कमल कुमार हिन्दी साहित्य में एक जाना पहचाना नाम है। 'गवाह' उनका हाल ही में प्रकाशित कविता संग्रह है जो तीन खंडों में विभक्त है। खंड एक में समकालीन संवेदना आशा-निराशा में पल रही है। आज के भ्रष्ट परिवेश में विवेक, मानसिक तनाव में कराह रहा है। इस संग्रह की सम्पूर्ण रचनाएं हर पल की कराहट का एहसास कराती हैं। सदियों की इस कसक में आशा की चिंतनी भी दबी है—'कोई विस्फोट/ सदियों सुलगोगा/भीतर-ही-भीतर/कोई बीज बरसों बाद उगेगा/बंजर को फोड़कर।'

समकालीन यथार्थ बिम्ब मानव मन को स्पन्दित कर रहे हैं—'सबेर लहलुहान/दरवाजे पर औंधी पड़ी है/उनकी आंखों का सूरज/सदा के लिए डूब गया है....मौत की रेंगती सरसराहट ही/जिन्दगी की रिलमिल है/सामने है भविष्य का पथरीला पठार/मेरा तुम्हारा हम सभी का।' धर्म और राजनीति में आदमी बदहवास हो गया है और भीतर की ओर सिकुड़ रहा है। आज के इस वातावरण के जिम्मेदार आदमी को सतर्क करते हुए एक महान संदेश दिया है।

खंड दो में नारी के अंतर्द्वन्द्व और व्यथा की कथा है। नारी को यहां विभिन्न भूमिकाओं में प्रस्तुत किया गया है। नए युग की प्रेमिका के रूप में वह पुरुष के 'स्व' पर बदली-सी छा जाना चाहती है, उससे कहती है—'तुम्हें देहयष्टि नहीं/मेरी दृष्टि/मेरे 'मैं'/मेरे 'मुझ' से प्यार करना होगा।' जो नई संवेदना, नई स्फूर्ति, नए स्पन्दन की तरह शताब्दियों से रुकी ठहरी पुरुष की चेतना को, निखार, तपा और तराश कर आना चाहती है।

नारी पत्नी के रूप में घर की जरूरी वस्तुओं के समान एक जरूरी वस्तु समझी जाती है। 'घर के बाहर/तुम्हारी नाम पट्टी है/भीतर कुर्सी है—मेज है/सोफा है—कारपेट है....तुम कारपेट की तरह बिछी रहो/परदे की तरह लटकती रहो/शौडलियर सी उजागर रहो।' घर के बाहर दफ्तर या काम पर गई हुई स्त्री का चेहरा रोबीला और गर्बीला होता है। किन्तु घर की दहलीज में पांव रखते ही वही चेहरा पर्स के साथ आलमारी में बंद हो जाता है। घर में वह घिघियाई सी, हाथ पसारे सी, उसका व्यक्तित्व कुंठ और ही हो सकता है। नारी की अवहेलना की चिंता की रचनाएं हैं ये—'हमारा नाम/घर के बाहर की नाम पट्टियों में नहीं है/पिता की विरासत में और घर की दीवारों की पूंजी गई/होई में भी नहीं है।' किन्तु घर की नींव नारी पर टिकी है।

खंड तीन में 'कविता' की बयानगी है, वह क्या है, कहां से और कैसे आती है और क्या करती है, इन सबका विश्लेषण है। अंतिम कविता में आज के परिवेश से जुड़ा मन और समाज में नारी की

स्थिति से चिंतित मन थक कर, अब थोड़ी देर धूप में बैठ, बसन्त की नई कोपलों को निहार अपने लिए जीना चाहता है। वह कभी गहराती सांझ में ओझल होती आकृतियों को देख रही है। यह 'सांझ' जीवन की सांध्य बेला का भी एहसास करा रही है। रात के बीत जाने पर सुबह का उजाला पर्वत पर सदाबहार सा खिल उठा है। बरफ पिघल कर सरनों को गुदगुदा रही है पर रहस्य के प्रति मनुष्य की जिज्ञासा ठोस हिम सी बनी रहती है।

डा. कमल कुमार की इस संग्रह की सम्पूर्ण रचनाएं उनके सशक्त लेखन का परिचय देती हैं और गहरी सोच की कविताएं हैं, जो सामाजिक, राजनीतिक चिंता व्यक्त करती हैं। □

डा. प्रेम दुआ 'सुधा'
टी-21/9, एयर फोर्स स्टेशन
पालम, नई दिल्ली-110010

संभावना की उजास

इस मौसम में (कविता संग्रह), कवि: वेद प्रकाश दुबे, अंशुमान प्रकाशन, X-217, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली, संस्करण 1991, मूल्य: 75.00 रुपये।

सा ठोत्तर दौर में शिल्प और कथ्य के दुहराव से कविता में जिस तरह की एकरसता पिछले वर्षों में पैदा हुई है, उससे कविता में नए लोगों की उपस्थिति और पहचान काफी कठिन हो गई है। पिछले दशक में नए कवियों में कुछ ऐसे हस्ताक्षर अवश्य उभरे हैं जिन्होंने समकालीन कविता में कायम रीतिबद्धता को तजकर कविता को नए अर्थ और संभावनाओं की प्रतीति दी है।

वेद प्रकाश दुबे जैसे युवा कवि की कविताएं इस संभावना का एहसास कराती हैं कि नए कवियों ने कविता को सामाजिक चिंता और मानवीय मूल्यों की चेतना से जोड़ा है।

'इस मौसम में' शीर्षक उनके कविता संग्रह की कविताओं से यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि आज के हालात में मानवीय मूल्यों को सर्वाधिक आघात पहुंचा है। अपसंस्कृति के चलते समाज में आते हुए बदलावों को यथार्थ बनावट और आवेगधर्मी अभिव्यक्ति से वेद प्रकाश ने यह स्थापित किया है कि इस दौर में यह शताब्दी लड़खड़ाकर बिखर गई है। लोग मृत परंपराओं का बोझ ढो रहे हैं। यथास्थितिशीलता को बयान करती ये कविताएं समाज के सुविधाहीन नागरिक की पीड़ा को ईमानदारी और शिद्दत से उभारती हैं।

कथ्य और अभिव्यक्ति की ऋजु रेखा पर टिकी ये कविताएं सच को सच और झूठ को झूठ कह देने में पूरी साहसिकता बरतती हैं। वेदप्रकाश ने अपने आत्म-कथ्य में आज की हिंसक प्रवृत्तियों, शोषक शक्तियों की ओर इशारा करते हुए यह स्थापित करना चाहा है कि उनकी कविताएं मनुष्य को उसकी सही पहचान कराती हैं। ये कविताएं उस सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा हैं जिसमें यह दुनिया सांस ले रही है तथा विश्वव्यापी हिंसक संस्कृति के बावजूद उसके भीतर बेहतर दुनिया के लिए उम्मीद की लौ जिन्दा है।

चौहत्तर कविताओं के इस संकलन में कवि की भावुक संवेदना को व्यापक विस्तार मिला है। 'जंगल की चीख', 'अक्सर', 'भाषा की पुकार', 'इस मौसम में', 'सार्थक प्रतीक्षा', 'बच्चे', 'निःशब्द', 'तुम्हारे होने से', 'बाहर और भीतर एक सच' तथा 'उसके लिए' जैसी कविताएं अनुभूति और विचार की वयःसंधि का प्रतिफलन हैं। ऐसा लगता है, कवि के पास कहने को तो बहुत कुछ है परंतु हर बार वह अपने मूल कथ्य तक पहुंचते-पहुंचते दूसरी कविता की भावभूमि में पहुंच जाता है। यही वजह है कि इन कविताओं में समग्रतः बिखरते मानवीय मूल्यों के प्रति छटपटाहट की निरन्तरता बिखरी हुई है। फलतः शब्दों और भावनाओं की वाग्स्फीति ने पूरे काव्य-विस्तार को ढक-सा लिया है।

इन कविताओं में यत्र-तत्र अनेक अच्छी, भावसंपन्न पंक्तियां मौजूद हैं जिन्हें पढ़कर कवि के अनुभव-विस्तार की परख की जा सकती है:

हृदय ने लिखकर/दी थीं कुछ कविताएं उसे
ऐसे जैसे देता है किसान/धरती को बीज
संसार को सूरज देता है धूप
हवा देती है सरसराहट
इंसानी गति को
शब्द देते हैं अर्थ जिंदगी को (पृष्ठ 124)

वेद प्रकाश के समग्र कविता संसार में संभावना की रेखाएं अनुभव की जा सकती हैं। इस कवि से उम्मीद की जा सकती है कि अगले संग्रह में वह अपनी कविताओं को संवेदना और विचारों की सचेत उजास दे सकेगा तथा वह शिल्प भी जिसके साहचर्य से कविता स्मृति में चिरस्थायी जगह बना पाती है। □

ओम निश्चल,
जी-1/506 ए, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-110059

अस्तित्व की तलाश में बेचैनी

तलाश (काव्य संग्रह); लेखक: ब्रजेन्द्र त्रिपाठी; प्रकाशक: जयश्री प्रकाशन, 4/115, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-32; मूल्य: 35 रुपये।

बंद हो गया है/घर से पानी निकलने का/हर रास्ता/नाबदान का सड़ा पानी/नम कर रहा है/प्रत्येक दीवार को। ये पंक्तियां आज की इन तमाम दुर्दशाओं और विकृतियों को शब्द देने में समर्थ हैं जिनकी बदौलत जीवन और अस्तित्व का संकट आ पड़ा है। क्या इन संकटों का कोई इलाज है? या फिर कोई ऐसा रास्ता है, जहां से निकलकर हम सुरक्षित जगह पहुंच सकते हैं? नहीं, ऐसा कहीं नहीं है। अब तो घर से पानी निकलने का रास्ता

बंद हो चुका है। नाबदान का सड़ा पानी घर की दीवार को नम कर रहा है। डर की बात है कि कहीं दीवार न गिर जाए और हम (?)...!

ब्रजेन्द्र त्रिपाठी का नवीन काव्य संग्रह 'तलाश' इन्हीं सवालियों से जूझने और उसमें से रास्ता निकाल पाने की छटपटाहट को शिंश है।

वसंतोत्सव के उपलक्ष्य में वसंत के स्वागत की तैयारियां, जगह-जगह तोरण बंदनवार और नाना प्रकार के रंगारंग आयोजन तब बिल्कुल बेमानी लगता है जब दस-बारह साल का एक बालक, जो मैला-कुचैला और मरियल-सा है, नंगे पांव है—ठंड से ठिठुरता खड़ा होता है और तड़पता हुआ कहता है कि बाबूजी। भूखा हूं, दो दिनों से कुछ खाया नहीं।

इसी तरह के कई रंग, कई विचार और कई संवेदनाएं इस संग्रह में बिखरी पड़ी हैं। जहां मूल्यों के नष्ट होने की पीड़ा है। व्यवस्था की निरर्थकता पर आक्रोश है। और जीवन और अस्तित्व की तलाश भी है जो गुम हो गए हैं कहीं। व्यक्ति व्यक्ति न रहकर बनता जा रहा है पूरा का पूरा मशीन। अपने अनुभव को रूप देने और उसमें तलस्पर्शी गहराई देने में कवि को निश्चय ही सफलता मिली है। कवि की चिंताधारा का एक महत्वपूर्ण पक्ष है—महानगरीय त्रासदी का। इस त्रासदी में जीवन के लिए संवेदना सुलभ नहीं होती। तेज रफतार भागती मोटरों और शोषण की हद पार करते पूंजीपति/उद्योगपति आदमी को आदमी नहीं रहने देते। वह उसे मशीन बना देते हैं, जहां वह अपने तमाम संबंधों को भूल जाता है। खुद अपने को भी भूलना पड़ता है उसे। जब वह अपने गांव लौटने की सोचता है तो संभव नहीं होता—

पर लौटना
क्या इतना सहज है!

इस प्रकार इस संग्रह में कवि अपने छोटे-छोटे और रोजमर्रा के अनुभवों को तराश कर एक व्यापक फलक देता है। इसमें बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग एक सीमा तक अच्छा बन पड़ा है। खनकते शब्दों का चयन इसकी अहम विशेषता है। इसी कारण कवि कहीं व्यवस्था के प्रति विद्रोह का आह्वान करता है तो कहीं अमानवीयता पर मचल उठता है। उसकी संवेदना जीवन की समग्रता की है जहां मनुष्य और मनुष्य के प्रति भेदभाव नहीं है।

लेकिन क्या कुछ और प्रश्न नहीं रह जाते? रह जाते हैं। बहुत-सी कविताएं हैं जिनमें कथन की इतिवृत्तात्मकता इतनी हावी है कि वे कविता तक नहीं बन पाई हैं। वहां सिर्फ विचार हैं, न कोई संवेदना है और न तलस्पर्शिता।

फिर भी कुछ कविताएं निस्संदेह प्रभावित करती हैं। जिसमें युग और जीवन की सूक्ष्म और तलस्पर्शी संवेदना व्यक्त हुई है। पूरे संग्रह में कवि की बेचैनी अस्तित्व की तलाश की है। और यही वह बिंदु है जो उसे संभावना का कवि सिद्ध करने में कोई कसर नहीं छोड़ता। □

द्वारा डा. मैनेजर पाण्डेय,
ट्रांजिट हाउस-5,
जे. एन. यू., नई दिल्ली-110067

युवा मानसिकता की कविताएं

कविता नहीं कुरुक्षेत्र (काव्य संकलन); संपादक: राजेश श्रीवास्तव; प्रकाशक: जयश्री प्रकाशन, दिल्ली; पृष्ठ संख्या: 88; मूल्य: 50 रुपये।

कविता जहां व्यक्तिगत स्तर पर कवि की आत्मानुभूति, आत्मचिंतन और जीवन के प्रति आत्मिक प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति है, वहां समष्टि के स्तर पर वह जीवन में विभिन्न स्तरों पर जूझते हुए लोगों के हर्ष-विषाद, जय-पराजय, सुख-दुख तथा आशा-निराशा को शब्दों एवं बिम्बों से व्यक्त करने का माध्यम है। संघर्ष यौवन का दूसरा नाम है। युवा मन कुछ आदर्शों को सम्मुख रख अपने परिवेश को परिवर्तित करने को व्याकुल रहता है। यही व्याकुलता कविता का रूप लेकर पाठकों और श्रोताओं को भाव-विभोर करती हुई उन्हें चिंतन और अनुभूति के साथ-साथ कर्म के स्तर पर भी सक्रिय बनाती है। 'कविता नहीं कुरुक्षेत्र' संकलन के आठ युवा कवियों की रचनाओं को इसी कसौटी पर कसना होगा।

काव्यविहीनता की ओर बढ़ रहे आज के दौर में यह संग्रह एक प्रकार से संतोष और राहत प्रदान करता है। इसे आक्रोश, कुंठा, जोश, परिवर्तन-कामना जैसी युवा जनित अनुभूतियों का प्रतिनिधि संकलन कहा जा सकता है। यद्यपि इसमें संकलित कुछ कविताएं कमजोर हैं, किन्तु कुल मिलाकर कथ्य, भाषा, बिम्ब-विधान तथा अनुभूति की ईमानदारी के कारण यह काव्य संग्रह स्वागत योग्य है।

व्यवस्था के प्रति विद्रोह का भाव युवा हृदय की अनिवार्य पहचान है। हर युग के कवि ने अपने प्रारंभिक दौर में अपने युग व्यवस्था को ललकारने का सफल-असफल प्रयास किया है। इस संग्रह की अनेक कविताओं में इस विद्रोह की मुखर गूंज मौजूद है। रमेश प्रसून की कविता 'जो अमलतास' और 'चीख रही मछली', आलोक बेजान की गजलें 'आधारहीन' और 'धज्जी-धज्जी विश्वास', सुभाष प्रेमी 'सुमन' की कविता 'कुत्ते' तथा अन्य कुछ काव्य रचनाएं इसी श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

सतपाल की गजल 'इन्कलाब देखा है', विपिन बिहारी की 'कविता हो तुम' तथा राजेश श्रीवास्तव की 'मुर्दों के बीच' और 'कविता नहीं कुरुक्षेत्र' इस वर्ग की प्रतिनिधि कविताएं हैं। एक उद्धरण देखिए :

गांधी गांडीव हो गया है अब

कलम की जगह

हाथों में आ गई हैं बंदूकें

अब कविता नहीं, कुरुक्षेत्र लिखा जाता है।

काव्य संग्रह की अधिकतर कविताएं आधुनिक शहरी मध्यवर्गीय परिवेश में से उपजी हैं। अतः कविताओं के उपमान तथा बिम्ब भी इसी परिवेश के हैं। यदि चयन पर थोड़ा अधिक ध्यान दिया गया होता तो यह संग्रह कुछ अधिक आकर्षक बन

सकता था। डा. नरेश मिश्र की गजलें इस संग्रह की सबसे दुर्बल कड़ी हैं।

शिल्प की दृष्टि से गजल, गीत तथा हाइकू जैसे नव प्रयोग भी संग्रह में बिखरे पड़े हैं। इस संग्रह में हिन्दी गजल को नई गरिमा देने का प्रयास झलक रहा है। कुछ गजलें और गीत तो गेयता, भाव-गहनता तथा भाषा सौष्ठव की दृष्टि से प्रौढ़ रचनाओं की श्रेणी में रखे जा सकते हैं। आशा करनी चाहिए कि इन आठ नवोदित कवियों के इस सामूहिक प्रयास का हिन्दी साहित्य में स्वागत होगा। □

सुभाष चंद्र 'सत्य'

सी-7/134 ए, केशवपुरम

लारेंस रोड, नई दिल्ली-110035

कथादेश : लघुकथाओं का विश्वकोश

पुस्तक का नाम : कथादेश (बृहद लघुकथा-संकलन); संपादक: सतीश राज पुष्करणा; प्रकाशक: अयन प्रकाशन, 1/20, महारौली, नई दिल्ली-110030; पृष्ठ संख्या: 700; मूल्य: 300 रुपये।

कथा साहित्य में लघुकथा ने अनेक तीखे विरोधों को झेलते हुए भी अंततः अपना विशिष्ट रूप रूपायित कर लिया है। हिन्दी साहित्य का कथा-जगत अब लघुकथा को अपने लिए आवश्यक मानने लगा है। प्रख्यात लघुकथाकार, आलोचक तथा सम्पादक डा. सतीशराज पुष्करणा द्वारा सम्पादित लघुकथा संकलन 'कथादेश' वास्तव में (लघुकथा) विश्वकोश के रूप में आंका जा सकता है।

विवेच्य ग्रंथ में लघुकथा जगत के छब्बीस बहुचर्चित हस्ताक्षरों की पच्चीस-पच्चीस लघुकथाएं हैं। 650 लघुकथाओं का एक कलेवर में समन्वित होना उत्साहवर्द्धक है। 'कथादेश' में विचरण से पूर्व डा. पुष्करणा ने भूमिका (हिन्दी लघुकथा की गौरवशाली परम्परा) में लघुकथा की उत्पत्ति, विकास, महत्व, प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं का योगदान, प्रमुख लघुकथाकार तथा आलोचकों का विद्वत्पूर्ण विशद आकलन प्रस्तुत किया है।

'कथादेश' में भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, जातिवाद, शिक्षा-प्रणाली, सामाजिक विषमता, धनौनी राजनीति, नारी उत्पीड़न आदि ज्वलंत विषयों पर अनेक लघुकथाओं के माध्यम से सटीक व्यंग्य किया गया है। लघुकथाकार की दृष्टि में उसकी समस्त छब्बीस कथाएं सर्वश्रेष्ठ होंगी। फिर भी कुछेक लघुकथाओं को 'वास्तविक लघुकथा' नहीं कहा जा सकता। ऐसी लघुकथाएं साधारण स्तर की और प्रभावहीन हैं। □

प्रो. नीरज ठाकुर

प्रवक्ता : हिन्दी विभाग,

आर्य कालेज, पानीपत-132103 (हरियाणा)



कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' को भारतेन्दु पुरस्कार

नई दिल्ली, प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर ने कहा है कि जो राष्ट्र अपनी सभ्यता का आदर नहीं करता वह कभी प्रगति नहीं कर सकता है। उन्होंने कहा कि लेखक और बुद्धिजीवी इतिहास के निर्माता होते हैं और वे जिस चीज का रचना करते हैं वह समय के साथ न तो बदलती है और न धुंधली पड़ती है। प्रधानमंत्री ने ये उद्गार गत 14 मार्च को नई दिल्ली में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुरस्कार प्रदान करते हुए प्रकट किए।

श्री चन्द्रशेखर ने कहा कि उत्कृष्ट साहित्य महलों में नहीं लिखा गया बल्कि वनों में साधु-संतों और साधारण जन द्वारा लिखा गया है। इन महान आत्माओं ने जिन मूल्यों की स्थापना की उसे युवकों के समक्ष लाने की आवश्यकता पर प्रधानमंत्री ने बल दिया।

समारोह को सम्बोधित करते हुए सूचना और प्रसारण राज्य मंत्री श्री सुबोध कांत सहाय ने कहा कि पुरस्कार विजेता बधाई के पात्र हैं। उन्होंने लोगों में पढ़ने के शौक को प्रोत्साहन देने के लिए प्रकाशन विभाग द्वारा किए जा रहे कार्यों पर प्रसन्नता व्यक्त की।

वर्ष 1989 का पहला पुरस्कार प्रख्यात पत्रकार एवं स्वतंत्रता सेनानी श्री कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' को उनकी पुस्तक 'तपती पगडीडियों पर पदयात्रा' के लिए प्रदान किया गया। उन्हें पुरस्कार स्वरूप 25,000 रुपये की नकद राशि प्रदान की गई। हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और अंग्रेजी के जाने-माने लेखक श्री देवेन्द्र इस्सर को 15,000 रुपये नकद का दूसरा पुरस्कार प्रदान किया गया। उन्हें यह पुरस्कार उनकी पुस्तक 'जन माध्यम सम्प्रेषण और विकास' के लिए दिया गया है। तीसरा 10,000 रुपये का नकद पुरस्कार श्रीमती रेखा रस्तोगी को उनकी पाण्डुलिपि 'प्राचीन भारत में प्रेक्षागृह' के लिए दिया गया।

इसके अलावा पांच अन्य लेखकों को पांच-पांच हजार रुपये नकद के मान पुरस्कार दिए गए। पत्रकार डॉ. राम मोहन पाठक को उनकी पुस्तक 'साहित्य पत्रकारिता' के लिए, श्री बच्चन सिंह को 'हिन्दी पत्रकारिता के नए प्रतिमान', श्री वीरेन्द्र गोहिल को 'ध्वनियों का इन्द्रधनुष' और डॉ. दुर्गा दास मुखोपाध्याय को 'जनसंचार के जन माध्यम' पुस्तक के लिए सम्मानित किया गया। श्री लक्ष्मीकांत शर्मा और डॉ. जे.एस. मूर्ति को उनकी पुस्तक 'भारत में जनसंचार के आयाम' के लिए संयुक्त रूप से मान पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

इससे पूर्व सूचना और प्रसारण मंत्रालय के सचिव श्री महेश प्रसाद ने प्रधानमंत्री तथा समारोह में उपस्थित अन्य गणमान्य अतिथियों का स्वागत किया। पुरस्कार विजेताओं को बधाई देते हुए उन्होंने लेखकों से अपील की कि वे जनसंचार विषयों पर हिन्दी में मौलिक पुस्तकें लिखने में अपना योगदान करें।

प्रकाशन विभाग के निदेशक डॉ. श्याम सिंह 'शशि' ने प्रधानमंत्री तथा अन्य विशिष्ट अतिथियों का स्वागत करते हुए अपने भाषण में प्रकाशन विभाग की हाल की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि प्रकाशन विभाग ने एक नई श्रृंखला शुरू की है। इसमें महान व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर प्रकट किए गए उद्गारों को छोटी-छोटी पुस्तिकाओं के रूप में सिर्फ एक रुपये मूल्य पर जनसाधारण को उपलब्ध कराया जा रहा है। विभाग ने 'हम सबकी पुस्तक माला' भी शुरू की है जिसमें सस्ते मूल्य वाली किताबें प्रकाशित की गई हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुरस्कार सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने 1983 में शुरू किया था। यह पुरस्कार जनसंचार विषयों पर हिन्दी में मौलिक लेखन को प्रोत्साहन देने के लिए हर वर्ष दिया जाता है। □



शिवप्रसाद सिंह को साहित्य अकादमी पुरस्कार

हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी साहित्य अकादमी ने गत 17 फरवरी से 24 फरवरी तक 'साहित्योत्सव' का आयोजन किया। इसका आरम्भ साहित्य अकादमी अध्यक्ष श्री बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा अकादमी 90 प्रदर्शनी के उद्घाटन तथा उसके बाद साहित्य अकादमी सभागार में विन्दा करन्दीकर के साहित्य: प्राणधार कला के रूप में विषय पर संवत्सर व्याख्यान के साथ हुआ। अन्य आकर्षण थे—पुरस्कार अर्पण समारोह, लेखक सम्मेलन तथा भारतीय साहित्य: शती समाप्ति मूल्यांकन विषय पर एकदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन।

19 फरवरी को साहित्य अकादमी पुरस्कार 1990 के 36वें पुरस्कार वितरण समारोह में विभिन्न भाषाओं के पुरस्कृत लेखकों को पुरस्कार प्रदान किए गए। इनमें दस कवि, आठ उपन्यासकार, तीन कथाकार तथा एक निबंधकार है। हिन्दी के लेखक शिवप्रसाद सिंह (नीला चांद), असमिया की स्नेह देवी (स्नेह देवी एर्कुकिगल्प), बांग्ला के देवेश राय (तिस्ता पारेर बृतान्त), डोगरी के तारा स्मैलपुरी (जीवन लैहरां), अंग्रेजी की शशी देश पांडे (दैट लांग्ड साइलेन्स), गुजराती के अनिल रामनाथ जोशी (स्टेच्यू), कन्नड के देवनूर महादेव (कुसुम बाले), कश्मीरी के गुलाम अहमद फाजिल (काशुर सरमाए), कोंकणी के रमेश भगवंत वेलुस्कर (साबुलगोरी), मैथिली के प्रभास कुमार चौधरी (प्रभासक कथा), मलयालम के ओ. वी. विजयन (गुरुसागरम), मणिपुर के नॉथोम्बम बीरेन सिंह (मपाल नाइदबसिदा ऐ), मराठी के आनंद रतन यादव (झोंबी), नेपाली के तुलसीराम शर्मा 'कश्यप' (आभा), ओडिया की बीणापाणि महान्ति (पाटदेई), पंजाबी की मनजीत टिवाणा (ऊणींदा वर्तमान), राजस्थानी के रेवतदान चारण 'कल्पित' (एछालों), संस्कृत के ओगेटि परीक्षित शर्मा (श्री मत्प्रतापराणायनं महाकाव्यम्), सिंधी के गोवर्धन महबूबानी 'भारती' (शीशे जा घर), तमिल के सु. समुतिरम् (वेरिल पषुत पला), तेलुगु के के. शिवा रेड्डी (मोहना! ओ मोहना!), उर्दू के अब्दुस्समद (दो गज जमीन) के लिए दिया गया।

अध्यक्षीय भाषण में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने खाड़ी युद्ध के कारण आंतकमयी माहौल पर चिन्ता व्यक्त की तथा लेखकों से युद्ध के खिलाफ शांति के लिए लेखन की अपील की। मुख्य अतिथि वरिष्ठ हिन्दी लेखक भीष्म साहनी ने बताया कि आज

साहित्य और साहित्यकार सामाजिक बुराईयों के अंधेरों में गुम होता जा रहा है।

पुरस्कृत साहित्यकारों तथा अतिथियों का स्वागत अकादमी के सचिव इन्द्रनाथ चौधुरी ने किया तथा धन्यवाद ज्ञापन उपाध्यक्ष गंगाधर गाडगिल ने किया।

20 फरवरी को रवीन्द्र भवन सभागार में आयोजित लेखक सम्मेलन में पुरस्कृत लेखकों ने पुरस्कृत कृतियों, अपनी रचना प्रक्रिया तथा लेखन प्रेरणा आदि विषयों पर अपने विचार रखे। 21 फरवरी से रविवार 24 फरवरी तक इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी प्रमुख आकर्षण का केन्द्र रही। इस संगोष्ठी में जमकर बहस हुई तथा विभिन्न भाषाओं के प्रतिनिधियों, उभरते लेखकों, पाठकों, प्रकाशकों, समीक्षकों और श्रोताओं ने खुलकर बहस में हिस्सा लिया। जिन विषयों पर चर्चा हुई वे हैं—परंपरा और आधुनिकता का द्वन्द्व, राष्ट्रीय संस्कृति में क्षेत्रीय पहचान, रंगमंच में नवपरिवर्तन और प्रयोग, भारतीय कथा साहित्य में सामाजिक राजनीतिक आधार एवं साहित्यिक प्रेरणा, कविता में आधुनिकता की खोज, जन साहित्य एवं पाठक वर्ग, प्रौढ़ तथा युवा लेखकों के बीच एक संवाद, लेखकों और पाठकों के बीच एक परिचर्चा भी हुई।

इस संगोष्ठी की प्रमुख विशेषता यह रही कि इसमें एक ही मंच पर विभिन्न भाषाओं के प्रमुख साहित्यकारों को एक साथ सुनने का अवसर मिला। संवत्सर व्याख्यान से आरम्भ हुए इस साहित्योत्सव में डा. नगेन्द्र, डा. नामवर सिंह, बीरेन्द्र कुमार, भट्टाचार्य, गंगाधर गाडगिल, कुरंतुल-ऐन-हैदर, हरभजन सिंह, के. शिवराम कारंत, यू.आर. अनंतमूर्ति, नवकान्त बरुआ, सीताकांत महापात्र, गोपीचन्द नारंग तथा अभिनेता उत्पल दत्त भी थे। □

मनजीत कौर भाटिया
साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

विश्वशान्ति में अनुवाद का योगदान

कालिकट विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग और अनुवादक मंच के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित त्रिदिवसीय अनुवाद संगोष्ठी का उद्घाटन 6 फरवरी को संपन्न हुआ। 'अनुवाद' पत्रिका की संपादक डा. गार्गी गुप्ता ने संगोष्ठी का उद्घाटन किया। उन्होंने विश्वबोध को जगाने में अनुवाद की भूमिका पर जोर दिया।

उपकुलपति प्रो. एम. के. प्रसाद ने अपने अध्यक्षीय भाषण में बताया कि आम आदमी को आसानी से समझने के उद्देश्य से तकनीकी शब्दों का अनुवाद करने का तरीका विवेकसंगत नहीं है। इससे अर्थ ग्रहण में कठिनाइयां बढ़ जाती हैं। हमारी प्राथमिकता को तय करके अनुवाद के तरीके को योजनाबद्ध बनाने का सुझाव भी उन्होंने सामने रखा।

उद्घाटन समारोह में पोलैंड के प्रो. एम. के. ब्रिस्की और श्री सी.पी.एस. नपियार ने आशीर्वाद भाषण दिए। संगोष्ठी के मुख्य संयोजक एवं निदेशक डा. जी. गोपीनाथन ने संगोष्ठी के उद्देश्यों पर रोशनी डाली।

समापन समारोह में प्रकाशन विभाग के निदेशक डा. श्यामसिंह 'शशि' विशिष्ट अतिथि थे। उन्होंने बताया कि भारत में अनुवाद का भविष्य उज्ज्वल है। सृजनात्मक भावनाओं का अनुवाद कम्प्यूटर कर नहीं पाएगा। उधर अर्थ का अनर्थ होगा।

इस संगोष्ठी में भारत के सभी प्रमुख विश्वविद्यालयों से प्रतिभागी आए। कुल पचास आलेख पेश किए गए। □

डा. आरसु
हिन्दी विभाग
कलिकट विश्वविद्यालय

ओशो रजनीश की पुण्य-तिथि पर विचार गोष्ठी

गत 19 जनवरी को पटना कालेज के सेमिनार हॉल में 'ओशो रजनीश' की पुण्य-तिथि एक विचार गोष्ठी के रूप में धूमधाम से मनाई गई। गोष्ठी का आयोजन दस्तक साहित्य परिषद, पटना के तत्वावधान में किया गया। वक्ताओं ने ओशो साहित्य को हिन्दी की समृद्धि और आलोचना-साहित्य के सुविकास के लिए संग्रहणीय बतलाया।

ओशो से एक समय गहरे जुड़े पटना कालेज के प्राचार्य डा. रामचंद्र प्रसाद ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि ओशो महान दार्शनिक और गहन अध्येता थे। वे देखने में मूर्तिभंजक लगते थे लेकिन वास्तव में सामंजस्य के शिखर व्यक्तित्व थे। वे एक विकसनशील क्रांतिकारी ऋषि थे।

अपने अध्यक्षीय भाषण में बिहार राज्य मगही अकादमी के अध्यक्ष प्रो. राम बुझावन सिंह ने ओशो को अद्भुत कलाकार, दार्शनिक और शैलीकार कहा। उन्होंने कहा कि रजनीश को पागल, खतरनाक एवं विद्रोही घोषित करने वाले लोग भी अब उनके प्रशंसक बन गए हैं। संत-काव्य-परंपरा के हिन्दी कवियों की वाणियों की सारगर्भित व्याख्याएं ओशो की विराट उपलब्धि हैं। हिन्दी साहित्य जगत सदैव इसका ऋणी रहेगा।

समीक्षक, आलोचक तथा भाषाविद एवं पटना कालेज स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. चंद्र किशोर पांडेय निशांतकेतु ने कहा कि ओशो एक बहुआयामी प्रबुद्ध चिंतक, भाष्यकार एवं व्याख्याकार थे। वे एकात्मवाद, स्व-साक्षात्कार, उन्मुक्त जीवन और उच्चादर्श के प्रबल पक्षधर थे। संत कबीर के बाद ओशो तर्कीनष्ठ और विद्रोही व्यक्तित्व निकले। □

राधा कृष्ण सिंह
एम.एम. बिहारी निवास, पी.डी. लेन
महेंद्र, पटना-800006 (बिहार)



लेखक-सम्मान समारोह

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर का लेखक-सम्मान समारोह तथा सम्मेलन पिछले दिनों महारानी कॉलेज, जयपुर के सभागार में सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. विद्यानिवास मिश्र के सान्निध्य में संपन्न हुआ। समारोह के उद्घाटन सत्र के विशिष्ट अतिथि राजस्थान पत्रिका के संस्थापक संपादक श्री कर्पूर चंद्र कुलिश थे। इस समारोह का उद्घाटन राजस्थान विधान सभाध्यक्ष श्री हरिशंकर भाभड़ा ने किया। अध्यक्षता राजस्थान के शिक्षा मंत्री श्री हरि कुमार औदीच्य कर रहे थे। सम्मेलन में राजस्थान के विभिन्न अंचलों से लगभग एक सौ साहित्यकार उपस्थित थे।

इस अवसर पर अकादमी ने अपने वार्षिक पुरस्कार तथा विशिष्ट सम्मान प्रशस्तियां भी प्रदान कीं। अकादमी का सर्वोच्च मीरा पुरस्कार 11,000/- रुपये का कानपुर विश्वविद्यालय के कुलपति तथा प्रमुख कथाकार-आलोचक डॉ. विश्वभरनाथ उपाध्याय को उनकी कृति 'जोगी मत जा' पर दिया गया। इसी प्रकार सुधीन्द्र काव्य पुरस्कार जोधपुर के डॉ. जबरनाथ पुरोहित को, रांगेय राघव कथा पुरस्कार जयपुर के भगवान अटलानी को, देवीलाल सामर नाटक पुरस्कार कोटा के डॉ. नरेन्द्रनाथ चतुर्वेदी को, अन्य विधा (रिपोर्ताज) पुरस्कार जयपुर के डॉ. सत्यनारायण को तथा बाल साहित्य का पुरस्कार बूंदी के डॉ. भैरूलाल गर्ग को प्रदान किया गया।

सम्मानित होने वाले साहित्यकारों में कोटा के श्री अमर सिंह, श्रीमती पार्वती जोशी, बीकानेर के डॉ. राजानंद तथा श्री करणपुर के श्री जनकराज पारीक थे।

इस द्विदिवसीय आयोजन में वैज्ञानिक जीवन दृष्टि और समकालीन साहित्य के संदर्भ में अनुभव-प्रक्रिया विषय पर क्रमशः कविता, कथा एवं नाटक विधाओं के संबंध में तीन परचे पढ़े गए तथा उन पर चर्चा हुई।

आरंभ में अकादमी अध्यक्ष डॉ. दयाकृष्ण विजय ने अकादमी के क्रियाकलापों पर प्रकाश डालते हुए अतिथि साहित्यकारों तथा सम्मानित-पुरस्कृत होने वाले लेखकों का स्वागत किया। □

भ. ला. व्यास
प्रवक्ता, लोकमान्य तिलक टी. कॉलेज
डबोक (उदयपुर)-313022



बालकृष्ण 'शर्मा' 'नवीन' पर संगोष्ठी

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सौजन्य से आयोजित डा. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' : राष्ट्रीय आंदोलन और सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में' विषय पर गत 23 से 25 फरवरी को एक राष्ट्रीय संगोष्ठी सम्पन्न हुई। मध्य प्रदेश उच्च शिक्षा अनुदान आयोग के अध्यक्ष डा. ओम नागपाल ने दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया। संगोष्ठी के निर्देशक प्रोफेसर लक्ष्मीनारायण दुबे ने 'नवीन' जी की बहुमुखी प्रतिभा पर प्रकाश डालते हुए कहा कि 'नवीन' जी का काव्य साहित्य तथा गद्य बांगमय प्रकाशित होकर आ चुका है। नए सिरे से अब 'नवीन' के सांगोपांग मूल्यांकन की परमावश्यकता है। मुख्य अतिथि प्रो. ओम नागपाल ने कहा कि 'नवीन' जी ने अपनी कविताओं को खुद जिया है।

समापन समारोह में श्री पद्मनाम तैलंग ने 'नवीन' जी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए यह घोषणा की कि चन्द्रशेखर आजाद एवं 'नवीन' जी का स्मारक भोपाल में बनाने का निर्णय लिया गया है। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रकाशन विभाग, भारत सरकार (दिल्ली) के निदेशक डा. श्याम सिंह शशि ने कहा कि हम 'नवीन' संगोष्ठी से कुछ लेकर जाएं, उनके बताए हुए मार्गों पर चलकर समाज का निर्माण करें। आज राष्ट्रीयता समाप्त हो गई है। यहां पर एशिया कविता होती है परन्तु राष्ट्रीय कविता समारोह कभी नहीं होता। 'नवीन' जी जैसे कवि आत्मा की बात कविता में उंडेलते थे। डा. शशि ने कहा कि प्रकाशन विभाग 'नवीन' जी पर एक पुस्तक प्रकाशित करेगा ताकि वह आम जनता तक पहुंच सके।

अध्यक्षीय भाषण देते हुए शिवकुमार श्रीवास्तव ने कहा कि 'नवीन' जी ने न केवल 'एक लहर इधर से आए एक लहर उधर से आए' जैसा कंठ गीत लिखा बल्कि कर्मक्षेत्र में भी ऐसा व्यवहृत किया जिससे समूचे राष्ट्र में चेतना का संचार हुआ।

इस अवसर पर सूचना और प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग की ओर से एक पुस्तक प्रदर्शनी भी लगाई गई। □

डा. राजीव दुबे

254, डेनिंग रोड, दक्षिण सिविल लाईन्स,
जबलपुर (मध्य प्रदेश)

बंजारा मेला

पिछले दिनों राजधानी में बंजारा मेले की दो दिवसीय गोष्ठी हुई जिसकी अध्यक्षता सुविख्यात साहित्यकार डा. श्याम सिंह शशि ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि "भारत में बंजारे बड़ी तादाद में आज भी खानाबदोश हैं। वे शहरों से दूर अपने टांडों में रहते हैं और मजदूरी का छोटा-मोटा धंधा करके अपना पेट पालते हैं। इनके पूर्वज कई साल पहले अपनी जन्मभूमि छोड़कर गए और पश्चिमी देशों में आज भी संघर्ष से जूझ रहे हैं। इनको न्यूनतम सुविधाएं भी मुहैया नहीं हैं।"



इस मेले में दिल्ली विश्वविद्यालय के भू-विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो. इन्द्रपाल सिंह, डा. दुर्गादास मुखोपाध्याय एवं अन्य विद्वानों ने बंजारों की समस्याओं और उनके उत्थान पर विचार प्रकट किए। □

प्रेम कपाड़िया

सम्पादक : हम दिलित

भारतीय सामाजिक संस्थान, लोदी रोड,
नई दिल्ली-3

महामती प्राणनाथ संगोष्ठी संपन्न

जामिया मिलिया इस्लामिया के हिन्दी विभाग अनुसंधान परिषद और महामती प्राणनाथ प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित संगोष्ठी सफल संपन्न हुई। अपने स्वागत भाषण में उपकुलपति प्रो. मुजीब रिजवी ने जामिया की धर्मनिरपेक्ष परंपराओं का जिक्र करते हुए प्रस्तुत संगोष्ठी के औचित्य और महत्व पर प्रकाश डाला। प्रो. रिजवी ने महामती प्राणनाथ के ऐतिहासिक महत्व की विवेचना में सम्राट औरंगजेब की तुलना में उनके योगदान को कीर्तिकारी बताया। हिन्दी अनुसंधान परिषद के सचिव अब्दुरहीम ने परिषद के कार्यकलाप का ब्यौरा दिया।

श्रीमती विमला मेहता, अध्यक्ष प्रतिष्ठान ने महामती प्राणनाथ का संक्षिप्त परिचय दिया। महामती प्राणनाथ का जन्म गुजरात में हुआ था। 1618-1695 के जीवनकाल में उन्होंने चौदह

वाणी-ग्रंथों की हिन्दी, हिन्दुस्तानी और गुजराती में रचना की। उनका काव्य लोक की वाचिक परंपरा में आता है। उन्होंने स्पष्ट किया कि वे संत कवि थे। हिन्दू-मुसलमान को सहज ज्ञान से धर्म का संदेश देते थे। उनके पन्नास्थित मंदिर में भागवत और कुरान सम्मानपूर्वक रखे जाते हैं। उन्होंने मजहब से सर्व धर्म-समभाव के अंशों का वाणी में काव्यानुवाद किया।

संगोष्ठी में डा. रणजीत कुमार साहा ने अपने आलेख में प्राणनाथ काव्य में आध्यात्मिक समन्वय की सामाजिकता पर शोध-प्रस्तुति की।

मुख्य अतिथि शिक्षाविद राजाराम शास्त्री ने कहा कि महामती ने प्रतीकों के माध्यम से समन्वय का प्रयास किया। उन्होंने आगे बताया कि बाहरी वस्तु और भीतरी वस्तु दो अलग-अलग चीजें हैं जो धर्म-कर्म में विद्यमान रहती हैं। उन्होंने जामिया में महामती के अध्ययन को और आगे बढ़ाने का भी आग्रह किया।



प्रो. माताबदल जायसवाल ने महामती प्राणनाथ के अनुसंधान संबंधी अध्ययन की जटिलता की ओर ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने हिन्दी साहित्य के अध्येताओं की सीमा का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया कि प्राणनाथ पर शोध, शोधत्सु से अरबी, फारसी और संस्कृत भाषा के पर्याप्त ज्ञान की अपेक्षा करता है।

हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. माजदा असद ने कहा कि महामती प्राणनाथ के साहित्य अध्ययन और व्यापक प्रसार के लिए विश्वविद्यालयों को भी आगे आना चाहिए। □

डा. जयपाल तरंग

25, जामिया नगर, नई दिल्ली-110025



डा. देवकीनन्दन 'शर्मा'
सम्मानित

श्री अमन सिंह आत्रेय हिन्दी विकास संस्थान, मेरठ ने देवनागरी डिग्री कालेज बुलंदशहर के हिन्दी विभाग के

अध्यक्ष डा. देवकीनन्दन शर्मा को उनके शोधग्रंथ 'प्रसाद-काव्य में वक्रोक्ति' के लिए पांच हजार एक रुपये से सम्मानित किया है। डा. अम्बा प्रसाद 'सुमन' ने मुख्य अतिथि के रूप में समारोह को सम्बोधित करते हुए कहा कि बिना विशाल हृदय के कोई कवि नहीं हो सकता।

समारोह की अध्यक्षता मेरठ विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डा. रमेश मोहन ने की। उन्होंने कहा कि हिन्दी के विकास के बिना देश की समृद्धि तथा एकता की कल्पना करना अर्थहीन है। □

डा. विष्णु शरण 'इन्दु'

**श्री अमन सिंह आत्रेय हिन्दी विकास संस्थान,
61-ए, साकेत, मेरठ (उत्तर प्रदेश)**



झालावाड़ संगीत समारोह

राजस्थान के झालावाड़ जिले में त्रिदिवसीय संगीत समारोह गत 8 से 10 फरवरी को ध्रुपद गायक जहरूद्दीन डागर के ध्रुपद गायन से सम्पन्न हुआ। अखिल भारतीय स्तर के इस संगीत समारोह का प्रारंभ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त सितारवादक पं. रविशंकर के सितारवादन से हुआ।

उद्घाटन समारोह झालावाड़ की ऐतिहासिक भवानी नाट्यशाला में आयोजित किया गया। पं. रविशंकर ने सितार पर यमन कल्याण बजाया। सितार पर धुन साध रहे रविशंकर के साथ तबले पर कुमार बोस और सरोद पर पार्थीसार्थी संगत कर रहे थे।

दूसरे दिन की संध्या झालावाड़, कोटा और बूंदी के लोक कलाकारों के नाम थी। शंकरिया, बुर्जिया, बंजारा नृत्य और हाड़ा रानी नृत्य नाटिका इस संध्या के आयोजन थे। इसमें लगभग पांच दर्जन लोक कलाकारों ने मोहक प्रस्तुतियां नृत्य और गीतों के माध्यम से प्रस्तुत कीं।

तीसरे दिन विख्यात कुचीपुड़ी नर्तक राजा एवं राधा रेड्डी ने अपने नृत्य की लुभावनी भंगिमाओं से सम्मोहन का प्रभाव उत्पन्न कर दिया। ठुमरी की विख्यात गायिका श्रीमती नैना देवी ने दादरा कहरवा एवं अन्य रागों में ठुमरी गायन प्रस्तुत किया।

उस्ताद जहीरुद्दीन डागर ने आलाद, धुपद, आराधना प्रधान देवी-देवताओं की स्तुतियां प्रस्तुत कीं।

समापन समारोह की अध्यक्षता मुख्य मंत्री श्री भैरोसिंह शेखावत ने की। केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा मुख्य अतिथि थे। समारोह का उद्घाटन पर्यटन मंत्री सुश्री पुष्पा जैन ने किया। □

प्रभात कुमार सिंघल
के. आर. 56, सिविल लाइन्स
कोटा-324001 (राजस्थान)

उमेश प्रसाद सिंह
के-100, लक्ष्मी नगर
विल्ली-110092



राष्ट्रीय बैले उत्सव

साहित्य कला परिषद दिल्ली के तत्वावधान में आठ दिवसीय राष्ट्रीय बैले उत्सव स्थानीय आडिटोरियम में सम्पन्न हुआ। इसमें देश के सुप्रसिद्ध नृत्य निरूपकों ने भाग लिया। उद्घाटन 27 फरवरी को दिल्ली प्रशासन के मुख्य सचिव श्री आर. के. टक्कर ने किया। उन्होंने कहा—“दिल्ली को भारत की सांस्कृतिक राजधानी बनाने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है।”

कार्यक्रम का आरम्भ 'शाने मुगल' से हुआ। इसमें महान मुगल सम्राटों के वैभव को दर्शाया गया। कथक शैली के इस नृत्य नाटक को भारतीय कला केन्द्र दिल्ली के कलाकारों ने पेश किया। निर्देशन शोभा दीपक सिंह व संगीत उस्ताद अमजद अली खान का था। अगले दिन केरल के कलाकारों ने 'भूमिजा' में सीताजी के बहुआयामी चरित्र का प्रदर्शन किया। नरेन्द्र शर्मा द्वारा निर्देशित प्रतिबिम्ब, कांफ्रेंस व एकलव्य में समाज व प्रशासन में कुण्डली मार कर बैठी बुराइयों व भ्रष्टाचार पर कुठाराघात किया गया। कथकली शैली में प्रदर्शित 'किंग लेयर' में इंग्लैंड के प्राचीन राजा लेयर और उनकी पुत्री कोरडेलिया की दुखदाई कहानी दर्शकों पर स्थाई प्रभाव छोड़ने में सफल रही। राजा लेयर अपनी दो अन्य पुत्रियों के बहकावे में आकर अपनी वफादार पुत्री कोरडेलिया को देश से निकाल देते हैं। कुछ ही दिनों बाद राजा मानसिक संतुलन खो कर एक डरावने तूफान में गुम हो गए। कोरडेलिया अपने पिता को ढूँढने का प्रयास करती है परन्तु

उसे जेल में डाल दिया गया। इसी बीच फ्रांस का राजा कोरडेलिया से शादी करने के लिए इंग्लैंड पर चढ़ाई कर देता है। इंग्लैंड के सैनिकों द्वारा कोरडेलिया की हत्या कर दी जाती है। बैले कलाकारों ने कथक शैली में इस नृत्य नाटक को प्रस्तुत करते हुए मानवीय कमजोरी, प्यार का प्रभाव, मानसिक तनाव, युद्ध व विजय का अनोखा प्रदर्शन किया। कार्यक्रम में कुल दस बैले नृत्य नाटक दिखाए गए। □

(पृष्ठ 37 का शेष)

दृष्टि से किया जाता है। प्रत्येक खिलाड़ी हर प्रकार से अपनी विजय की कामना करता है। नृत्य ढोल की ध्वनि के साथ किया जाता है। उसी के अनुसार खिलाड़ी आगे-पीछे बढ़ते हैं। डांगरा लिए नर्तक आगे-आगे नाचता है तथा धनुष-बाण लिए नर्तक उसके पीछे चलते हुए नृत्य करता है। अचानक ढोल की ध्वनि के संकेत पर तीर छोड़ा जाता है। आगे वाला नर्तक धरती पर गिर पड़ता है। नियमानुसार तीर घुटने से नीचे ही लगना चाहिए। तीर का निशाना घुटने से ऊपर लगने पर धनुष-बाण वाले खिलाड़ी को पराजित माना जाता है और उसे जुर्माना देना पड़ता है। प्राचीन समय में यह भी नियम था कि सही निशाना न लगने पर आगे वाला खिलाड़ी डांगरा से उसका सिर भी काट सकता था। परन्तु बाद में यह नियम बदल दिया गया।

सही निशाना लगने पर आगे वाला खिलाड़ी जमीन पर गिर जाता है और तब पीछे वाला नर्तक धनुष-बाण को जमीन में गाड़कर घुटनों के बल बैठता है, तथा उसे अपने इष्टदेव, गोत्र-वंश, दादा-पिता का नाम सुनाकर अपना तथा अपने वंश के गौरव का बखान करता है। पराजित खिलाड़ी बिना किसी आपत्ति के 'जू रा बल्या जू' अथवा 'जो आपने कहा वह सब सही तथा स्वीकार है' कहता रहता है। पुनः ढोल की आवाज के साथ दोनों ही खिलाड़ी 'हल-हल. मेरे बिसुए' (अर्थात् बिस्सू की जय-जयकार करते हुए) शब्द उत्सहा से साथ कहकर पुनः नाचने लगते हैं।

महाभारत काल का स्मरण दिलाने वाला यह मेला प्राचीन संस्कृति की धरोहर है, परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार ने जनजातीय समूहों की समस्याओं की ओर विशेष ध्यान दिया है। आज जनजातीय क्षेत्रों में कई विकासोन्मुख परियोजनाओं के तहत विकास कार्य चल रहा है इसलिए जागरूक तथा शिक्षित लोग अपने प्राचीन सांस्कृतिक आचार-विचारों के प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। वे इसे ढोंग तथा सामाजिक पिछड़ापन समझ कर उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगे हैं। अतः सरकार को चाहिए कि आर्थिक विकास के साथ-साथ जनजातीय लोगों को उनकी सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा हेतु भी प्रोत्साहित करे। □

द्वारा : डॉ. हरिमोहन
पो. बॉक्स नं. 20

श्रीनगर-गढ़वाल (उत्तर प्रदेश)-246174



साहित्यकार समाज के आभूषण हैं

दिल्ली के उपराज्यपाल श्री मार्कण्डेय सिंह ने गत 13 मार्च को राजनिवास में हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से आयोजित 'सम्मान अर्पण' समारोह में राजधानी के जाने-माने 9 'साहित्यकारों' को अकादमी के सम्मान से अलंकृत किया। यह समारोह सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर और प्रो. विजयेन्द्र स्नातक के सान्निध्य में संपन्न हुआ।

इस अवसर पर श्री मार्कण्डेय सिंह ने कहा कि साहित्यकार समाज के आभूषण होते हैं। इनके द्वारा रचा गया साहित्य समाज का दर्पण भी होता है और उसे नई दिशा और रोशनी भी देता है। इसीलिए ऐसे कलम के धनी साहित्यकारों का सम्मान करना बड़े सौभाग्य की बात है। इनके साहित्य से हमें राष्ट्रीय एकता, भाषाई सद्भाव और भावनात्मक एकता की प्रेरणा मिलती है।

इस समारोह में जाने-माने साहित्यकार श्री गिरिजा कुमार माथुर को 'शलाका सम्मान' से अलंकृत किया गया। उनको सम्मान स्वरूप 51,000/- रुपये का चैक, एक शॉल, प्रतीक चिह्न तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। साहित्य-सेवा के लिए श्री शिवदान सिंह चौहान, डॉ. श्याम सिंह शशि, श्रीमती मृदुला गर्ग तथा डॉ. कमल किशोर गोयनका को सम्मानित किया गया। डा. शशि ने पुरस्कार में मिली सम्पूर्ण राशि 'सामाजिक विज्ञान हिन्दी विश्वकोश' के निर्माण के लिए दान में दी दी।

राष्ट्रभाषा के विकास एवं प्रसार के क्षेत्र में प्रो. अनिल विद्यालंकार तथा प्रो. सूरजभान सिंह को और

हिन्दी-पत्रकारिता-सेवा के क्षेत्र में श्री बांके बिहारी भटनागर तथा श्री राजेन्द्र माथुर को सम्मानित किया गया। इन सम्मानित साहित्यकारों में से प्रत्येक को 21,000/- रुपये का चैक, शॉल, प्रतीक चिह्न तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए।

समारोह के प्रारंभ में हिन्दी अकादमी के सचिव डॉ. नारायणदत्त पालीवाल ने सभी साहित्यकारों का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए कहा कि—इन साहित्यकारों ने अकादमी की विनम्र भेंट स्वीकार करने की कृपा की है, जिससे हिन्दी अकादमी का गौरव बढ़ा है। यह सम्मान इन महानुभावों की महती सेवाओं की पहचान और हिन्दी के प्रति समर्पण का भावना का सम्मान है। श्री अक्षय कुमार जैन, प्रो. माजदा असद एवं डॉ. गोपाल शर्मा ने भी अपने विचार प्रकट किए और साहित्यकारों को बधाई दी।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर तथा प्रो. विजयेन्द्र स्नातक ने सभी साहित्यकारों को बधाई देते हुए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की और अकादमी को इस पवित्र कार्य के लिए साधुवाद दिया। □

जगदीश चन्द्र शर्मा
हिन्दी अकादमी-दिल्ली

ए-26/27, सनलाइट इंडियोरेंस बिल्डिंग
आसफ अली रोड, दिल्ली-110002

डाक सार प्रमाणित डा. (डी. एन.) 105। बना पूर्व भुगतान क एन. डा. पा. एस. ओ., नई दिल्ली में पोस्ट करने के लिए लाइसेंस
यू (डी. एन.)-49 प्राप्त दिल्ली डाक आर. एन. 701/57
P. & T. Regd. No. D (DN)/105 Delhi Postal
Licenced U (DN)-49 to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi R.N. 701/57

